चन्दामामा
सितम्बर १९६२

Prasad Process

PRIVATE LIMITED.

CHANDAMAMA BUILDINGS, MADRAS-26

......Started in 1953 we have installed the latest types of Graphic Arts Machinery, employed the best Artists and Artisans who have been specially trained to execute the finest works for

YOU
and
THE TRADE.....

CALENDAR OR A CARTON..
POSTER OR A PACKAGE SLIP..
LABEL OR LETTER DESIGN..

......DONE SUPERBLY
IN MULTICOLOR

Bombay Representing Office:
101, Pushpa Kunj, 16-A. Road, Church Gate, Bombay-1
PHONE: 243229

Bangalore Representative:
181, 6th cross Road, Gandhinagar, Bangalore-9.
PHONE: 6333

सितम्बर १९६२

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ६-००

"क्या कहा,

अमृतांजन

नहीं है घर में ?

अब मैं जोड़-जोड़ के दर्द में क्या लगाऊँ ?"

कौन जाने कब आपको अमृतांजन की जरूरत पड़ जाय — इसलिए हमेशा इसे पास रखिये। यदि आपके घर में अमृतांजन है तो आप अपने को सुरक्षित समझेंगे।

अमृतांजन लिमिटेड

१४/१५, लाज चर्च रोड, मद्रास-४

बम्बई-१, कलकत्ता-१, नई दिल्ली-१ में भी

सितम्बर १९६२

भारत का इतिहास, रामायण कथा, भयंकर घाटी, रामतीर्थ कथाएँ ये सब अति उत्तम हैं। मैं तो इतना कहूँगा कि चन्दामामा के जैसे कोई भी पत्रिका नहीं है।

मोहनलाल चावड़ा, खरियार.

मैं आपका चन्दामामा कई वर्षों से लगातार पढ़ता आ रहा हूँ। हिन्दी चन्दामामा हर मास पढ़ता हूँ। इसमें शिक्षाप्रद कहानियों के अलावा महान पुरुषों के चरित्र भी दिये जाते हैं। इसके चित्र बड़े लुभावने होते हैं। आपकी पत्रिका भारत की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका है।

नरिन्द्र सोंधी, करनाल.

"चन्दामामा" की कहानियाँ बड़ी रसीली होती हैं। अगर आप "चन्दामामा" में कोई वर्ग पहेली भी दें तो एक चन्दामामा में चार चाँद और लग जाय।

मेरे विचार से यह पत्रिका सर्वश्रेष्ठ है।

कुमारी जागीर कौर, डिगबोई.

आप चुटकुले प्रकाशित करें। "दास और दास" को फिर से जारी करें। "साल में एक झूठ" "भयंकर घाटी" चतुर बीरबर" तथा "नौकर की चाल" प्रशंसनीय हैं।

भागवत प्रसाद अग्रवाल, भाटापारा.

मैं दो तीन साल से आपकी "चन्दामामा" पढ़ता आ रहा हूँ।

अगस्त के अंक में "मुसाफिर व भाई-बहिन" कहानी बहुत ही अच्छी लगी। अधिक क्या लिखूँ, इसकी जितनी तारीफ की जाय थोड़ी है।

आपको जब जरूरी काम होता है, तभी तो आप तार देते हैं। फिर आप पता पूरा क्यों नहीं लिखते ताकि आपका तार जल्दी पहुंचे।

अधूरा पता होने से तार के पहुंचने में देर लगने की संभावना रहती है।

पर एक तरीका ऐसा भी है, जिससे दाम भी कम लगें और काम भी जल्दी हो। यदि आप अपना तार टेलीफोन के पते पर भेजें, तो ऐसा हो सकता है। इसके लिए आपको पता इस प्रकार लिखना होगा; जैसे :—'बनर्जी, टे. फो. ३१६७०, नई दिल्ली'। ज्यों ही वह तार नई दिल्ली के तारघर में पहुंचेगा, त्यों ही वह उस टेलीफोन नम्बर पर पढ़ कर सुना दिया जायेगा।

पते में 'टे. फो. ३१६७०' एक ही शब्द गिना जाता है।

हमें उत्तम सेवा का अवसर दीजिए
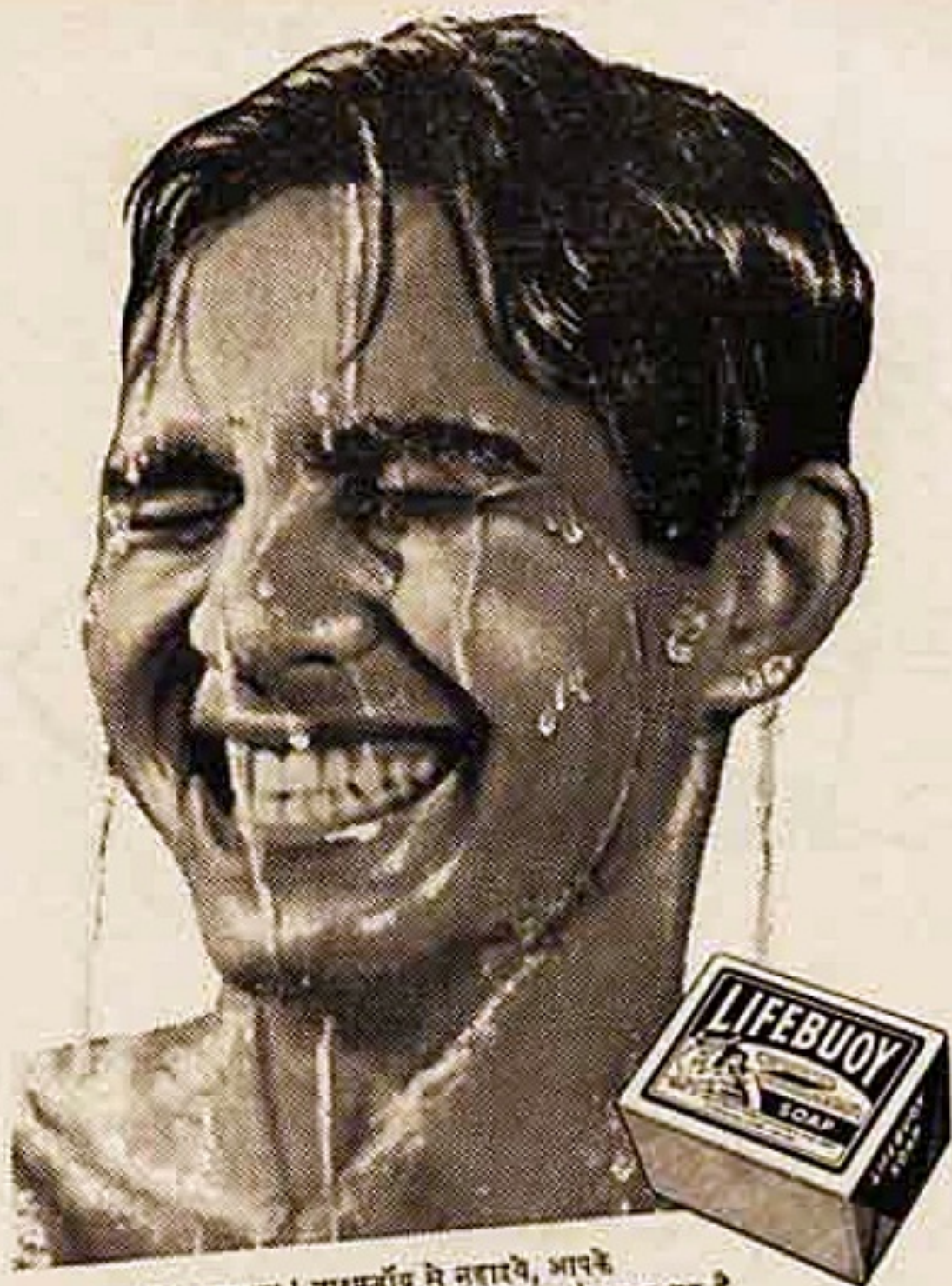
ताज़गी का तराना ! लाइफ़बॉय से नहाइये, आपके
तनमन में ताज़गी का तराना गूंज उठेगा ! और मज़ा यह है
कि नहाते समय, लाइफ़बॉय मैल में छिपे कीटाणुओं को
धो डालता है और आप को एड़ी से चोटी तक तरोताज़ा कर देता है ! जी हाँ,
लाइफ़बॉय से आप का सारा परिवार तंदुरुस्त रहेगा ।

लाइफ़बॉय है जहाँ, तंदुरुस्ती है वहाँ !

L. 33-X29 HI

हिंदुस्तान लीवर का उत्पादन

स्कूल
फिर
खुल गया...
ये तैयार हैं बिन्नी के कपड़ों में
—जो मज़बूती और
उत्कर्ष के लिए मशहूर हैं।
QUALITY FABRICS

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

इस मास से हम एक और गेय कथा—"कुमार सम्भव" दे रहे हैं। यह उसी शृंखला की कड़ी है, जो हम पिछले अंकों में "चन्दामामा" में प्रकाशित करते आये हैं।

कई पाठक पूछते हैं कि आप इसके अतिरिक्त क्यों नहीं कुछ और कवितायें देते? हम यह निवेदन करना चाहेंगे कि कहानियों के पत्र में उन्हीं कविताओं को ही स्थान दिया जा सकता है जिनमें कहानी हो। यदि हम अधिक कवितायें देंगे, तो शायद कहानियों के लिए काफ़ी स्थान न हो।

वर्ष : १४ सितम्बर १९६२ अंक : १

गुप्त साम्राज्य के ह्रास होते ही मंगोलिया के हुणों ने कुछ जगहों पर अपने राज्य स्थापित कर लिए। ये असभ्य और क्रूर थे। पाँचवीं सदी के अन्त में और छटी के प्रारम्भ में इनका प्रभाव काफी विस्तृत रहा।

जिन्होंने हुणों के राज्य को विस्तृत किया, उनमें तोरमान और उसके लड़के मिहिरकुल उल्लेखनीय हैं। हुणों का जिसने मुकाबला किया, वह दशपुर का राजा यशोधर्म था।

छटी शताब्दी के उत्तरार्ध में, उत्तर भारत में मौखरी वंश के राजा और दक्षिण में चालुक्य राजा प्रमुख थे।

मौखरों का कहना था कि उनका मूल पुरुष पुराण युग का अश्वपति था। इनमें जो प्रथम प्रसिद्ध हुआ और जिसने महा राजाधिराज उपाधि अपने नाम के साथ लगाई थी, उसका नाम था ईशानवर्मा। ५५४ ई. स. के एक शिलालेख के अनुसार आन्ध्रों, शूलिक और गौड़ को इसने पराजित किया था। (शूलिक का मतलब चालुक्य हो सकता है) मौखरी वंशजों ने भी विदेशीयों का मुकाबला किया। ईशानवर्मा के बाद शर्ववर्मा, अवन्तीवर्मा, ग्रहवर्मा ने शासन किया।

ग्रहवर्मा की पत्नी का नाम राज्यश्री था। वह पुष्यभूति वंश के स्थानेश्वर के राजा प्रभाकर वर्धन की लड़की थी। इसके दो भाई थे। उनका नाम था, राजवर्धन और हर्ष। राज्यश्री के पति ग्रहवर्मा की माल्वा के राजा ने हत्या करवा दी। तब राज्यश्री के भाई राज्यवर्धन ने अपनी बहिन के वैधव्य का बदला तो ले लिया, परन्तु गौड़

राजा शशांक ने साजिश करके उसको भी मरवा दिया।

इस प्रकार स्थानेश्वर के सिंहासन का और मौखरियों के राज्य का हर्ष उत्तराधिकारी बना। ६०६ में हर्ष का शासन प्रारम्भ हुआ। लगता है, यह इच्छापूर्वक गद्दी पर न बैठा था। परन्तु इसका काल भी भारतीय इतिहास में सुवर्ण काल है। इसकी राजधानी कन्नौज थी।

हर्ष ने छः वर्ष तक युद्ध करके शत्रुओं को पराजित किया। ६१२ में उसने अपने साम्राज्य को सुदृढ़ करके अपने को सम्राट घोषित किया।

६३४ के पूर्व हर्ष दक्षिण के दिग्विजय के लिए निकला, परन्तु वातापि के राजा चालुक्य राजा, द्वितीय पुलकेशी ने हर्ष का विरोध किया। परन्तु पुलकेशी की मृत्यु के बाद ६४३ में हर्ष दक्षिण की दिग्विजय करता गंजां (उड़ीसा) तक आया।

हर्ष साम्राज्य का केन्द्र कान्यकुब्ज गंगा के पूर्वी तट पर था। चीनी यात्री ह्यूनस्यान्ग ने लिखा है कि यह नगर सुरक्षित था और इसमें बड़े बड़े सौध थे। जहाँ देखो, वहाँ बाग और बावड़ियाँ थीं।

नागरिक धनी और विद्वान थे। नगर श्री सम्पदा से परिपूर्ण था।

हर्ष ने चीन से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किये। उसका परिचय ह्यूनस्यान्ग से हुआ, जो भारत में बौद्धिक क्षेत्र देखने आया था। हर्ष शैव मतावलम्बी था, पर उसने बौद्धमत के लिए भी बहुत अभिमान दिखाया। उसने मांस भक्षण और प्राणी हत्या भी निषिद्ध कर दी। उसने बहुत-सी धर्मशलाएँ, मठ आदि बनवाये। उसने बहुत से दान आदि भी किये।

६४३ में हर्ष ने कान्यकुब्ज में और प्रयाग में दो असाधारण सम्मेलन करवाये। इन दोनों में चीन का यात्री उपस्थित हुआ। कान्यकुब्ज का सम्मेलन बौद्धमत के महायान मार्ग की प्रशंसा व ह्यूनस्यान्ग की उन्नति प्रदर्शित करने के लिए आयोजित हुआ था। इस सम्मेलन में २० राजा, हज़ार बौद्ध मतावलम्बी, ब्राह्मण, जैन मत वेत्ताओं ने हिस्सा लिया। प्रयाग के सम्मेलन में पाँच लाख प्रतिनिधियों ने। वे दूर दूर से निमन्त्रित किये गये थे। हर्ष ने उनको उपहार दिये। सम्मेलन तीन दिन तक हुआ। तीनों दिन क्रमशः बुद्ध, सूर्य और शिव की प्रतिमाएँ रखी गईं। जो पाँच वर्षों में उसने उपार्जन किया था, वह सब हर्ष ने दान कर दिया। पुराने कपड़े पहिनकर उसने बुद्ध की आराधना की।

हर्ष ने ४० वर्ष शासन किया। ६४६ में वह दिवंगत हुआ। अव्यवस्थित विच्छिन्न उत्तर भारत में उसने उचित शासन की व्यवस्था की। सब को समान रूप से न्याय मिलता। उसकी राजधानी कान्यकुब्ज "महोदय श्री" के नाम से उसके बाद भी प्रसिद्ध हुई। वह दक्षिण को ही अपने वश करने में असफल रहा।

हर्ष ने अपने पूर्वज समुद्रगुप्त, अशोक आदि का अनुकरण करने का प्रयत्न किया। पाश्चात्य इतिहासकारों ने उसको "हिन्दु युग का अकबर" बताया है। उसके दरबार में बाण, मयूर, दिवाकर व ह्यूनस्यान्ग आदि प्रतिभाशाली पंडित थे। हर्ष स्वयं बड़ा लेखक था, उसकी कई कृतियों का आज भी मिलना हमारा सौभाग्य है।

कुमार संभव

शिव को पाकर पार्वती की
पूर्ण हुई सब कामना,
सफल हुई गिरिराजसुता की
जनम-जनम की साधना।

रहने लगे ससुर के घर शिव
निशि दिन मोद मनाते,
पार्वती को देख-देख वे
मन में नहीं अघाते।

सर्प नहीं अब रहा आभरण
बदला भेष पुराना,
लगे पहनने सोने के ही
अलंकार वे नाना।

मूंगों की माला को शिव ने
फेंक कहीं था डाला,
हुई गले में शोभित उनके
अब सुमनों की माला।

पीतांबर को पहन उन्होंने
बाघांबर को त्यागा,
कस्तूरी को देख अंग से
था भभूत भी भागा।

लगते वे ज्यों कामदेव हो
वहाँ दूसरा आया,
और रती ने पार्वती में
जन्म दूसरा पाया।

पार्वती शिव के पांवों में
देती पायल बांध,
लास्य नृत्य तब चलता रहता
शिव का वहाँ अबाध।

पार्वती को देख सदाशिव
भूल गये कैलास,
भूली पार्वती भी सुध-बुध
पा प्रियतम को पास!

["भारतीभक्त"

विद्याधर गंधर्व कभी जब
निकल उधर थे आते,
शिवगण के हाथों वे अपनी
दुर्गति खूब कराते।

पकड़ खींचते चोटी उनकी
और फाड़ कपड़े भी देते,
गंदी चीजें डाल-डालकर
नाकों दम उनको कर देते।

देवगणों ने आ सुरपति से
हाल कहा जब सारा,
सभा बुलाकर सुरपति ने तब
इस पर खूब विचारा।

बुला अग्नि को कहा उन्होंने—
"जाओ तुम ही शिव के पास,
भस्म तुम्हें वे कर न सकेंगे
यह रक्खो विश्वास।

चारों तरफ मचा रक्खा है
विकट गणों ने शोर,
निकल न पाता भय से उनके
कोई भी उस ओर।

आकर कहना शिव से सादर—
हमने बहुत सहे,
रोकें अपने सभी गणों को
जिससे शांति रहे।"

शिव के गण थे वहाँ विचरते
पशुओं-से दिन-रात,
छूट उन्हें थी, खूब मचाते
रहते वे उत्पात।

करते रहते शोर बहुत वे
पथिक सदा भय पाते,
होती दुर्गति उनकी जो थे
भूले-भटके आते।

अप्सरायें आती थीं जब
करने वहाँ विहार,
शिव के गण उनसे भी करते
थे भद्दा व्यवहार।

अग्निदेव तब चले वहाँ से
ध्वजा धूम की फहराये,
तेजपुंज-से दिशा-दिशा को
अरुण प्रभा से दमकाये।

वाहन जो था मेंढा उनका
था वह बहुत विशाल,
बैठे थे उसपर वे अपनी
लप-लप जीभ निकाल।

स्वाहा देवी पत्नी उनकी
भी थी उनके साथ,
देख उन्हें सुर-नर-मुनियोंने
टेके अपने माथ।

कानन-कानन में आ पहुँचे
वे हिमपति के आंगन में,
तेज देखकर उनका शिवगण
छिपे तुरत जा कानन में।

शिवजी घर में क्रीड़ारत थे
पार्वती के संग,
प्रेम-नशा था मन पर छाया
पिये बिना ही भंग।

बाहर दरवाजे पर बैठा
नन्दी देता था पहरा,
अग्निदेव को बाहर ही वह
सका नहीं लेकिन ठहरा।

अग्निदेव जा पहुँचे अंदर
शिव थे भाव-विभोर,
पार्वती के नयन बने थे
उस क्षण मुग्ध चकोर।

अग्निदेव को देख वहाँ पर
शिव का जागा क्रोध,
किया पार्वती ने भी अपना
सहसा प्रकट विरोध।

आँखें तीसरी खोली शिव ने
गयी अग्नि पर वह बेकार,
शिव ने तब तो और क्रुद्ध हो
दिया शक्ति-आयुध ही मार।

उसके लगते ही तो गिरकर
अग्निदेव हो गये अचेत,
रहे काँपते थर-थर तब भी
हुआ उन्हें जब कुछ-कुछ चेत।

धीरे-धीरे चले वहाँ से
अग्निदेव कुछ बोल न पाये,
तेज हीन-सा उनको पाकर
शिव के गण भी दौड़े आये।

खींची पूँछ उन्होंने मेंढे
की आफत में जान,
किसी तरह वह भागा उनसे
बचकर तीर समान।

देवलोक आ अग्निदेव ने
कहा सभी जब हाल,
बोले तब ब्रह्माजी हँसकर
सहलाते मूँछों के बाल—

"नाहक ही हो डरे अग्नि तुम
बात भला क्या डरने की,
खतरा तुमको जरा न शिव से
आशंका क्यों मरने की?

शिव की शक्ति एक तो केवल
रहती गंगाजी के पास,
और दूसरी को रक्खे हो
तुम ही अपने पास।

अब ऐसा तुम करो कि जिससे
काम बने ही सारा,
जाओ, अब तुम वहाँ जहाँ है
बहती गंगा-धारा।

अपनी तुम शिवशक्ति वहाँ जा
देना गंगा में ही छोड़,
और देखना तुम तब कैसे
लेती हैं घटनाएँ मोड़!

[१४]

[जंगल में केशव आदि को शाखादण्डी मान्त्रिक का अंगरक्षकों के साथ आना दिखाई दिया। उन्होंने शाखादण्डी को पेड़ की टहनी से बाँध दिया, उनके घोड़े ले लिये। उन पर सवार होकर वे भाग निकले। गाँववाले उनका पीछा करने लगे। जंगलियों के सरदार ने उनकी मदद करने का वचन दिया। वह उनको एक गुप्त जगह पर ले जाने लगा। बाद में]

केशव, जयमल्ल, बूढ़ा और जंगलियों का सरदार, उस घने जंगल में एक घंटे तक चलते रहे। कहीं कोई रास्ता न था, सब जगह अन्धेरा था। कहीं कुछ दिखाई न देता था।

यदि सरदार को मालूम हो गया कि वे कौन थे, तो सम्भव है कि वह उनको सैनिकों को सौंप दे—यह सन्देह बूढ़े और केशव और जयमल्ल को सता रहा था।

क्योंकि शाखादण्डी की आपत्ति अब टल गई थी, इसलिए उन सब ने घोड़ों पर सवार होकर भाग निकलना ही उस समय उचित समझा।

बूढ़े ने चुपचाप यह बात केशव और जयमल्ल से भी कही। पर वे इसके लिए न माने। "यदि अन्धेरे में, यह बिना जाने कि वे किस ओर जा रहे थे, भागते गये, तो अक्षापुर के आसपास भी पहुँच सकते

गिर-गिराकर मर भी गया, तो मेरा लड़का, इस संसार के धक्के खा सकेगा और सफल हो सकेगा—बूढ़े को पक्का विश्वास हो गया।

सब से आगे जंगलियों का सरदार चल रहा था। वह एक महावृक्ष के नीचे रुका। उसने अपने भाले से उस पेड़ के तने पर तीन बार मारा।

फौरन पेड़ के पीछे से आवाज़ आई—"कौन है, ठहरो!" प्रश्न ओर से सुनाई दिया।

सरदार भाला ऊपर उठाकर "गड़ेजन्ना, गड़ेजन्ना" दो बार ज़ोर से चिल्लाया।

थे। तब उन पर ज़रूर आपत्ति आयेगी।" उन्होंने कहा।

"आधे राज्य के लालच में यदि इस जंगली ने ही धोखा देने की सोची, तो क्या किया जाय?" बूढ़े ने कहा।

केशव ने म्यान में रखे तलवार की ओर इशारा किया। जयमल ने तरकश में से एक बाण निकाला और फिर उसको रख दिया। अपने लड़के और उसके मित्र ने जो बहादुरी और बुद्धिमत्ता दिखाई थी, उसे देखकर बूढ़ा सन्तुष्ट हुआ। इस बुढ़ापे में अगर मैं कहीं

तुरत जंगली युवक वहाँ भागे भागे आये। उन्होंने पूछा—"जंग सरदार क्या हुक्म है?" वे सिर नीचा करके खड़े हो गये।

"ये तीन राहगीर हैं। डाकुओं से बचकर आये हैं और हमारी रक्षा चाहते हैं। इनको सवेरे तक बचाना हमारी ज़िम्मेवारी है। हमारे लोगों में से पाँच दस को गाँव के पास भेजो। वहाँ हमारे आदमियों में और गाँव के दुष्टों में युद्ध हो रहा है। उनसे यह मालूम करके आने

के लिए कहो कि वहाँ क्या हुआ है।" गड़ेजन्ना ने कहा।

सरदार का हुक्म होते ही एक पेड़ के पीछे भागा और दूसरा जयमल्ल और केशव को लेकर पासवाली गुफा की ओर चलने लगा।

केशव और उसके साथी पेड़ पौधे से ढके हुए गुफा में पहुँचे। जंगलियों ने जो फल दिये, वे खाये।

वे इधर भुना हुआ हरिण का माँस खा रहे थे और उधर ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक भूख और अपमान से जला जा रहा था और गाँववालों को गालियाँ दे रहा था। उसकी बुरी हालत थी।

"विद्रोहियों को आश्रय तो दिया ही और राज दूतों को मारने के लिए, उनको जंगल के रास्ते में तैनात करते हो। इस महा अपराध के लिए, मैं इस गाँव के बड़े छोटे, बूढ़े, बच्चे, स्त्री, मर्दों—सबको क्षण में भस्म कर सकता हूँ। ॐ हूँ हूँ, फट.... कालभैरव।" ब्रह्मदण्डी का मन्त्रपाठ सुनकर चिल्लाते-चिल्लाते कुछ लोग जंगल से भागे भागे गाँव में आने लगे। उनके हाथ की मशालों की रोशनी में देखा जा सकता

था कि कुछ लँगड़ा रहे थे और कुछ घायल थे और उनके साथी उनको ढोकर धीमे-धीमे ला रहे थे।

"विद्रोही कहाँ हैं!" भ्रष्टदण्डी चिल्लाया। उसके अंगरक्षक जितवर्मा और शक्तिवर्मा आदि कुछ लोग, गाँववालों की ओर भागे। पर जो उस तरफ़ भागे आ रहे थे, वे गाँव के ही युवक थे। उनके चेहरों पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। उनमें कोई ऐसा न था, जिसे घाव न लगे हों।

"क्या विद्रोही भाग गये हैं!" जितवर्मा और शक्तिवर्मा ने पूछा।

"वे यूँही न भागे, हम पर अँगलियों को भी छोड़ते गये। हम में से कुछ लोग मारे भी गये। आपके आधे राज्य को बड़ी-सी नमस्ते।" गाँव के युवकों ने कहा।

इतने में भ्रष्टदण्डी वहाँ आया। वह समझ गया कि भेस बदलकर, केशव, जयमल्ल और बूढ़ा हाथ से निकलकर भाग गये थे। उसके गुस्से की हद न थी।

वह गरजा—"मैं नहीं जानता था कि इस गाँववाले इतने डरपोक हैं। इतने सारे तुम हो और तुम तीन विद्रोहियों को भी न पकड़ सके, जितवर्मा और शक्तिवर्मा, तुम तुरत जाकर महाराजा और राजगुरु से यहाँ जो कुछ हुआ है, उसके बारे में बताओ। यदि इन विद्रोहियों को न पकड़ा गया, तो विन्ध्याचल पहुँचते पहुँचते हम मार दिये जायेंगे।"

जितवर्मा और शक्तिवर्मा एक दूसरे का मुँह देखने लगे। दोनों डरने लगे। अगर भ्रष्टपुर के रास्ते में इन द्रोहियों को हमने पकड़ लिया, तो हम कहाँ के रहेंगे! वे सोचने लगे।

उनके मन की बात ताड़कर, भ्रष्टदण्डी ने हुंकार करके कहा—"तुम मेरे

अंगरक्षक हो, अगर तुम पर भरोसा करके, विन्ध्याचल की ओर गया, तो मौत को मोल लेना है।"

"यह नहीं, ब्रह्मदण्डी! क्या यह इतना जरूरी है कि यह बात रातों रात, राजगुरु के पास पहुँचाई जाय!" जितवर्मा ने पूछा।

"जरूरी! क्यों नहीं है! अगर उन विद्रोहियों को यूँही घूमने दिया गया, तो हम विन्ध्याचल कैसे पहुँच सकेंगे! उन्होंने हमारे घोड़े भी तो चुरा लिए हैं। राजगुरु को यह सब बता दिया गया, तो वे अपने सैनिक भेजकर, उनको ढुँढ़वा देंगे न! यह जितना जल्दी हो सके, उतना अच्छा है!" ब्रह्मदण्डी ने कहा।

जितवर्मा और शक्तिवर्मा ने गाँव के पाँच दस आदमियों को धन का लालच दिया। उनको साथ लेकर ब्रह्मपुर की ओर निकल पड़े। वे अभी कुछ दूर गये थे कि मान्त्रिक भागा-भागा आया। जितवर्मा का कन्धा पकड़कर कुछ दूर ले गया। "जित, यदि तुम शक्ति के साथ चले गये, तो मैं यहाँ अकेला रह जाऊँगा। इन दुष्टों में से किसी ने मेरा गला

काट दिया, तो मेरी क्या हालत होगी? तुम यहीं रहो। शक्ति नगर चला जायेगा।"

जितवर्मा और शक्तिवर्मा ने भी आपस में तय कर लिया। जितवर्मा, ब्रह्मदण्डी के साथ गाँव में रहने के लिए मान गया। दस गाँववालों को साथ लेकर, सवेरा होते होते शक्तिवर्मा ने ब्रह्मपुर पहुँचकर राजगुरु के दर्शन किये।

जो कुछ गुज़रा था, उसे बढ़ा-चढ़ाकर, शक्तिवर्मा ने राजगुरु को सुनाया। राजगुरु ने सब सावधानी से सुनकर कहा—"तो ये तीनों मेरे प्रयत्न को विफल करने की कोशिश में हैं, मेरे मार्ग में विघ्न पैदा कर रहे हैं।" मन ही मन सोचकर उसने सेनापति के पास खबर भिजवाई।

थोड़ी देर बाद सेनापति के आते ही राजगुरु ने बताया कि ब्रह्मदण्डी की जान जंगल में जाती जाती बची थी। "यह बात अब साफ़ हो गई है कि वे तीनों द्रोही अपने राज्य की सीमा में ही हैं। तुम सब तरफ़ सैनिकों को भेजकर उनको पकड़ो। सीमा पर जो सैनिक हैं, उनको भी सावधान कर दो। इन द्रोहियों ने अब क्षत्रियों का वेष पहिन रखा है। बूढ़े ने साधु का वेष धारण कर रखा है, मालायें वगैरह पहिन रखी हैं।"

सेनापति के राजगुरु से विदा लेकर, अभी दो-तीन घंटे भी न हुए थे कि उसने सैनिकों को कई टुकड़ियों में जंगल छानने के लिए भेज दिया। एक-एक टुकड़ी में बीस-बीस सिपाही थे। फिर वह स्वयं, पचीस सैनिकों को लेकर विद्रोहियों को पकड़ने निकला।

ठीक दुपहर थी। सूर्य अंगारे बरसा रहा था। जंगल में पेड़ों के नीचे साया थी।

उस गुफा में से जहाँ उन्होंने रात काटी थी केशव, जयमल्ल और बूढ़ा गुफा के सामने के पेड़ों के नीचे बैठ गये। उनके सामने एक पीठिका पर, जिस पर शेर के चमड़े बिछे हुए थे, गड़ेजन्ना बैठा हुआ था। केशव और उसके साथी अपनी यात्रा से बारे में गड़ेजन्ना से बातें कर रहे थे।

यकायक दो जंगली युवक पेड़ों के पीछे से हाँफते-हाँफते बाणों की तरह आये। गड़ेजन्ना ने उनकी ओर आश्चर्य से देखा। "क्या हुआ!" उसने पूछा।

उन युवकों ने थोड़ी देर तक सन्देह की दृष्टि से केशव और जयमल्ल की ओर देखा। "जन्ना सरदार, आप थोड़ा इस ओर आओ। बतायेंगे।"

गड़ेजन्ना पीठिका पर से उठकर उनके साथ कुछ दूरी तक चल कर रुका। एक युवक धीमे धीमे अपने सरदार से कुछ कहने लगा। गड़ेजन्ना ने कुछ सुना, फिर सिर एक तरफ़ फेरकर, केशव और उसके साथियों को चकित होकर देखा— फिर सिर हिलाता हिलाता उनकी ओर आने लगा।
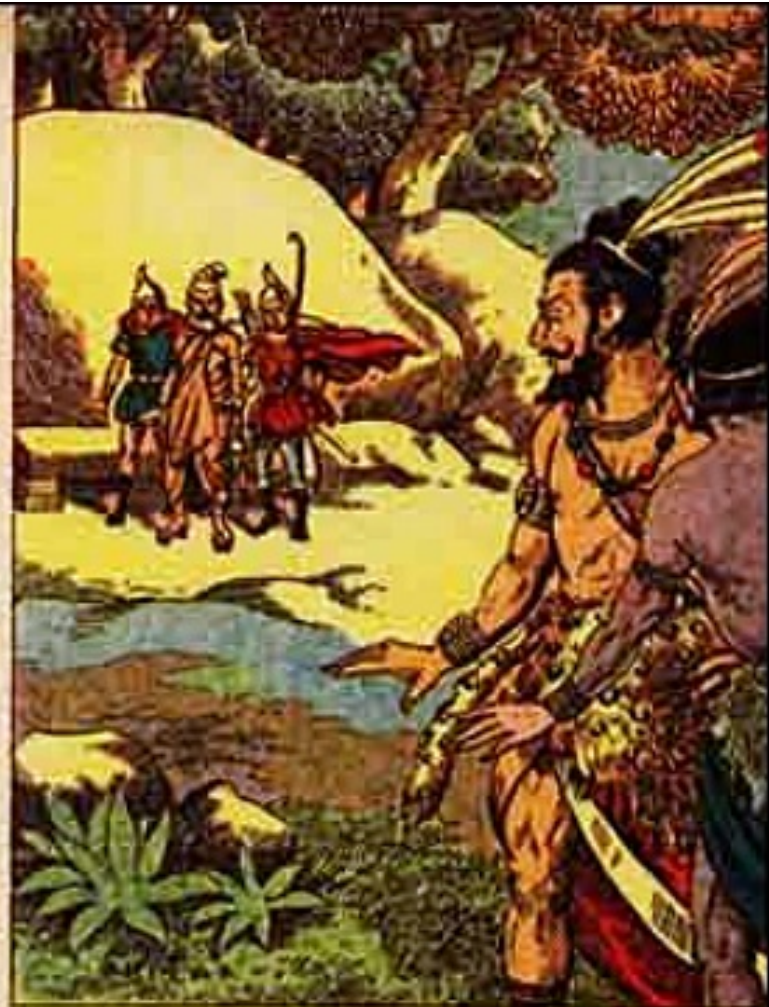
केशव ताड़ गया कि उन पर कोई आपत्ति आनेवाली थी। जयमल्ल और बूढ़े का हाथ बरबस म्यानों पर चला गया। यह सब गड़ेजन्ना देख रहा था। उसने मुस्कराते मुस्कराते हुए कहा—"तुम्हारी बहादुरी तारीफ़ के काबिल है। तुम्हारा भेद मालूम हो गया है। अमापुर के सैनिक तुम्हारे लिए सारा जंगल छान रहे हैं। सीमा के सैनिकों को भी सावधान कर दिया गया है। तुम न क्षत्रिय हो, न साधारण यात्री ही। राजा से तुम्हारी शत्रुता है।"

"आधे राज्य के लालच में गड़ेजन्ना, क्या तुम शरणागतों को शत्रुओं को सौंपने जा रहे हो!" केशव ने पूछा।

गड़ेजन्ना ठहाका मार कर हँसा। पीठिका पर से नीचे सीधा गिरा। फिर उठकर कहने लगा—"आधा राज्य नहीं, यदि सारा ब्रह्मापुर राज्य भी दे, तो भी मैं न लूँगा। मुझे क्या जरूरत है राज्य की! यह महारण्य मेरा राज्य है। मेरे कुलवाले, यहाँ घूमने फिरनेवाले साधु और जन्तु मेरी प्रजा है। तुम तुरत जंगली वेष पहिन लो। मेरे साथी तुम्हें सीमा से बाहर ले जायेंगे।"

यह सुनकर केशव और जयमल्ल के आनन्द की सीमा न थी। उन्होंने गड़ेजन्ना के सामने दो-तीन बार अपनी कृतज्ञता व्यक्त की। गड़ेजन्ना ने जो हरिणों की छाल दी, उन्होंने पहिन ली। सिर पर पंख लगा लिये। अपने कपड़ों का गट्ठर बाँधकर, कन्धे पर डाल वे चल पड़े।

गड़ेजन्ना ने दोनों जंगली युवकों को बुलाकर कहा—"पहिले इन तीन घोड़ों को जंगल में भगा दो। फिर मेरे मित्रों को जंगल के रास्ते राज्य की सीमाओं से बाहर ले जाओ। यदि इस प्रयत्न में सीमा के सैनिकों से लड़ना पड़ जाये, तो पहिले तुम्हारे प्राण जायें, समझे।

देखते-देखते घोड़े जंगल में भगा दिये। गये। जंगली युवक, एक उनके आगे और दूसरा उनके पीछे चल रहे थे। और उनके बीच में जंगलियों का वेष पहिनकर, केशव उसका पिता और जयमल्ल ब्रह्मापुर की सीमाओं से बाहर जाने के लिए निकल पड़े।

(अभी है)

सिन्दूर की रक्षा

राजा की दी हुई हजार मुहरों की थैली लेकर मधु अपने गाँव के लिए निकला। वह पहाड़ की बगल में मुड़ा ही था कि उसे पेड़ की टहनी से फाँसी लगाकर मरने की कोशिश करता एक युवक दिखाई दिया। देखने में वह ऐसा लगता था जैसे कोई दुल्हा हो उसने नये कपड़े भी पहिन रखे थे। मधु ने उसके हाथ से फन्दा छीन लिया और झट टहनी पर से रस्सी भी काट दी।

"अरे भाई तुम्हें क्या तकलीफ़ है! क्यों मरने की सोच रहे हो! अगर तुम मुझ से कुछ मदद चाहते हो तो बताओ।"

यह सुन उस युवक ने पूछा—"मुझे तुमने क्यों नहीं मरने दिया! यदि मैं जीवित रहता हूँ तो कष्ट ही कष्ट हैं। यदि मुझे सौ मुहरें न मिलीं तो मेरी इज़्ज़त न बचेगी। अब मुझे सौ मुहरें कौन देगा! यदि दुनियाँ में ऐसे दानी होते तो आत्महत्या करने की नौबत ही क्यों आती!" वह यह कहकर रोने लगा।

मधु ने उसे ढाढ़स देते हुए कहा—"रोओ मत, मैं दूँगा तुम्हें सौ मुहरें। यदि तुम्हारे कष्ट उनसे दूर होते हों, तो तुम सुखपूर्वक रहो।" उसने थैली निकालकर सौ मुहरें उस युवक को दे दीं।

वह युवक उन्हें लेकर तुरत कहीं भाग निकला। उसका यों भाग जाता देखकर मधु को अचरज हुआ। मैंने तो उसे इच्छा पूर्वक धन दिया था, फिर वह यों क्यों

भागा जैसे चोर हो। उसने बहुत सोचा पर उसे इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिला। मधु ने चारों ओर जो देखा, तो उसे एक गठरी दिखाई दी। वह गठरी हो न हो उस युवक की थी। क्योंकि कपड़ों का ठीक वैसा ही जोड़ा जैसा कि उसने पहिन रखा था, उस गठरी में था। मधु ने अपने पुराने कपड़े उतार दिये। और उन कपड़ों को पहिन कर निकल पड़ा। मधु ने जिस युवक की रक्षा की थी वह अभागा था। उसका नाम श्यामसिंह था। उसका पिता न था। छुटपन से ही वह बुरी सोहबत में रहा। अपनी माता की बात न सुनकर सारा धन बरबाद कर दिया। आखिर कर्ज़ भी लिया और कर्ज़वाले उसे तंग करने लगे।

श्यामसिंह की शादी पांच साल पहिले हुई थी। पत्नी सयानी हो गई थी पर वह उसे अपने घर न लाया था। ससुर उस पर दबाव डाल रहे थे कि वह अपनी पत्नी को ले जाये।

इधर कर्ज़वाले उसका मकान लेकर उसको और उसकी माँ को घर से निकालने की सोच रहे थे और उधर ससुर पत्नी को ले जाने के लिए कह रहे थे। वह शिकंजे में था। वह सोच न पा रहा था कि उल हालत में क्या किया जाये। उसकी माँ उसके कर्ज़ के बारे में नहीं जानती थी। इसलिए उसने अपने लड़के को डाँट डपटकर ससुराल भेजा।

ससुराल वालों ने उसे नये कपड़े दिये, दो चार दिन रहने के लिए कहा। पर उसने उनकी बात न सुनी वह अपनी पत्नी को लेकर उसी दिन शाम को निकल पड़ा। जल्दी ही अन्धेरा हो गया। पति पत्नी उस दिन एक पेड़ के नीचे सो रहे।

पत्नी की आँख लगते ही श्यामसिंह उठा। एक और रास्ते से पहाड़ के पास आया। उसने सोचा कि सिवाय आत्महत्या करने के उसके सामने कोई और रास्ता न था। वह आत्महत्या करने ही वाला था कि भगवान ने मधु को उस तरफ भेजा।

श्यामसिंह को भय था कि मधु सौ मुहरें फिर न लेले। इस भय में वह अपनी गठरी छोड़-छाड़कर भाग निकला। परन्तु कुछ दूर जाने के बाद उसे एक और बात सूझी। इन सौ मुहरों से तो केवल घर ही मिल सकेगा। मधु की थैली में तो और भी बहुत सी मुहरें थीं। यदि वे भी मैंने ले लीं तो मेरी जिन्दगी आराम से कट जायेगी।

श्यामसिंह, मधु की मुहरोंवाली थैली चुराने के उद्देश्य से एक बड़ा-सा पत्थर लेकर मधु के रास्ते में छुप गया। थोड़ी देर बाद मधु उस तरफ आया। उसके चले जाने के बाद श्यामसिंह ने पीछे से उसके सिर पर ज़ोर से पत्थर मारा। मधु बेहोश हो गिर गया। श्यामसिंह ने उसकी फेंट में से थैली ले ली और मुहरें निकाल लीं। इतने धन के हाथ में आते ही श्यामसिंह की मन की हालत बिलकुल बदल गई। जीवन पर उसे मोह होने लगा, उसमें पत्नी के लिए न मालूम कहाँ से प्रेम उमड़ आया। उसे अपने पुराने जीवन से घृणा भी हो गई।

पत्नी कहाँ गई होगी? फिर अपने मायके चली गई होगी—श्यामसिंह ने सोचा। जब मेरे पास खूब धन है क्यों न शहर जाऊँ, गहने, अच्छे-अच्छे कपड़े खरीदकर ससुराल जाऊँगा, वहाँ कुछ दिन आराम से बिताकर अपने गाँव जाऊँगा—श्यामसिंह ने सोचा।

सवेरा होने पर श्यामसिंह शहर पहुँचा। जौहरी की दुकान में जाकर गहनों का सौदा कर रहा था। परन्तु श्यामसिंह की दी हुई मुहरों पर राजा की मुद्रा देखकर जौहरी ने चुपचाप राजा को खबर भिजवाई। गहने दिखाने के बहाने उसने बहुत देर तक श्यामसिंह को दुकान में बैठाये रखा।

आखिर सैनिकों ने आकर श्यामसिंह को राजा के सामने उपस्थित किया। थैली को राजा ने पहिचान लिया। जब उसकी मोहरें गिनी गईं, तो ठीक हज़ार थीं। बिचारा श्यामसिंह उनमें से एक भी न खर्च सका।

"तुम्हारे पास यह थैली कहाँ से आई!" राजा के पूछने पर श्यामसिंह ने कहा कि किसी दानी ने दी थी। जब पूछा गया कि "क्यों दी थी!" तो वह कोई जवाब न दे सका।

"तुम्हारा कौन-सा गाँव है!" पूछने पर, श्यामसिंह ने अपने गाँव का नाम न देकर, एक और गाँव का नाम लिया। उस गाँव में रहनेवालों के बारे में जब राजा ने पूछा, तो वह कुछ न कह पाया।

राजा को सन्देह हुआ और उसने उसे कैद में डलवा दिया। मधु सुरक्षित घर

पहुँचा था कि नहीं, राजा ने यह जानने के लिए कुछ आदमी भेजे।

इस बीच इधर श्यामसिंह की पत्नी पद्मा पति के उठकर जाने के थोड़ी देर बाद उठी। जब उसे मालूम हुआ कि उसका पति उसको अकेला छोड़कर कहीं चला गया था, तो उसने वह न किया, जिसका उसके पति ने अनुमान किया था। वह अपने ससुराल जाने के लिए बहुत दिनों से उतावला हो रही थी, यदि वह वापिस गाँव में जाती तो लोग पूछते—"तुम्हारे पति कहाँ हैं!" उसे शर्मिन्दा होना पड़ता, इसलिए पद्मा आगे ही चली। किसी से रास्ता पूछकर वह अपने ससुराल जाना चाहती थी।

बहुत दूर चलने के बाद वह उस जगह आई जहाँ मधु था। क्योंकि उसने वे ही कपड़े पहिन रखे थे, जिन्हें उसके माँ-बाप ने श्यामसिंह को दिये थे, इसलिए उसने अनुमान किया कि वह उसका पति ही था। यही नहीं, वह अब तक यह ठीक तरह न जानती थी कि उसका पति कैसा था।

यह सोच कि किसी ने उसके पति को मारा था, वह उसकी सेवा शुश्रुषा करने

लगी। मधु को जल्दी ही होश आ गया। उसने जब अपना सिर के पिछले भाग पर हाथ फेरा, तो वहाँ सूजन थी। क्योंकि वह हट्टा-कट्टा था इसलिए उसने इस सूजन की परवाह न की। उसने पद्मा को देखकर सोचा—"कौन है वह?" उसको होश आते ही पद्मा लजाती-लजाती दूर खड़ी हुई। मधु यह भी न जानता था कि उसने उसकी उपचर्या की थी। उसने अपनी थैली टटोली, उसने कहा—"मुझे मारकर कोई चोर मेरी थैली ले गया है।" पद्मा ने कुछ न कहा।
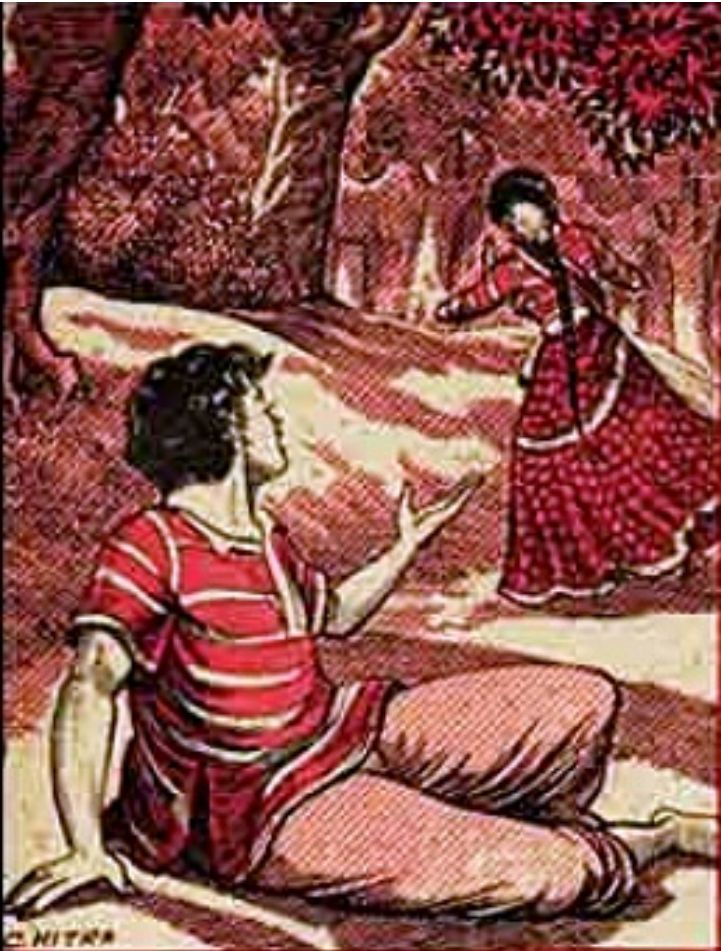
मधु बीते पर फ़िक्र न करता था। वह उठा, कपड़े झाड़कर, अपने गाँव की ओर चल पड़ा। पद्मा भी उसके पीछे-पीछे चुपचाप चल पड़ी।

यह देख मधु ने पीछे मुड़कर देखा—"कौन हो तुम? तुम्हारे साथ कोई नहीं? कहाँ जा रही हो?" उसने पूछा। फिर थोड़ी देर सोचकर उसने कहा—"अगर तुम चाहो, तो मैं तुम्हें तुम्हारी जगह छोड़कर, अपने रास्ते चला जाऊँगा। मेरे गुरु ने मुझे उपदेश दिया था कि परोपकार करना चाहिए।"

उसकी बातें सुनकर, पद्मा ने सोचा कि चोरों की मार के कारण उसके पति का दिमाग बिगड़ गया था। "आपके सिवाय मेरा कौन है? मैं कहाँ जा सकती हूँ? जहाँ आप जायेंगे, वहाँ मुझे जाना होगा।" पद्मा ने कहा।

पद्मा इन बातों का ठीक मतलब न जान सकी। उसने निस्संकोच कहा—"मैं अपने घर जा रहा हूँ। मेरे साथ चले आओ। मेरी माँ तुम्हारे बारे में सब कुछ मालूम कर लेगी।"

यह सुन पद्मा को बड़ा सन्तोष हुआ। दोनों मधु के घर पहुँचे। मधु के लिए

मां इन्तज़ार कर रही थी। उसने पहिले पहल पद्मा के बारे में पूछा।

"माँ, मैं नहीं जानता यह कौन है! रास्ते में मुझे दिखाई दी। शायद अकेली है। मेरे साथ चली आई। शायद इसका कोई नहीं है, इसलिए मैं साथ ले आया। जब मैं कुछ पूछता हूँ, तो लजाकर सिर नीचा कर लेती है। तुम्हीं इसकी बात मालूम करो, अगर बन सके तो इसकी मदद करो।"

फिर उसने अपनी माँ से अपनी शिक्षा के बारे में, राजकुमार की रक्षा के बारे में, राजा के सम्मान के बारे में, रास्ते में आते आते युवक की आत्महत्या के प्रयत्न के बारे में, फिर चोरों ने कैसे उसे मारकर, थैली ले ली थी उस बारे में कहा।

पद्मा यह सब अलग खड़ी हो सुन रही थी, उसे दो बातें साफ़ साफ़ मालूम हो गई। एक यह कि मधु उसका पति न था और उसका पति, उसे अकेला छोड़कर, आत्महत्या करने गया था। मधु ने उसकी रक्षा ही न की, बल्कि उसे सौ मुहरें भी दी थीं। उसके बाद उसके पति का क्या हुआ—वह अनुमान न कर सकी।

इतने में सैनिक आ गये। उन्होंने मधु से कहा। राजमुद्रावाली, मुहरोंवाली थैली के साथ एक युवक पकड़ा गया है। मधु ने बताया कि उसकी थैली चोरी चली गई थी। फिर उसने कहा कि उस में नौ सौ मुहरें ही होनी चाहिए थीं। हज़ार में से मैंने सौ मुहरें एक अभागे को दी थीं। उसने थैले में से निकालकर वे कपड़े भी दिखाये, जो उस आदमी ने पहिन रखे थे।

सैनिकों ने कहा कि उस युवक ने भी वैसे ही कपड़े पहिन रखे थे। मधु जान गया कि उसी व्यक्ति ने उसकी थैली चुराई

थी, जिसकी उसने मदद की थी। पद्मा भी जान गई कि चोर उसका पति ही था। वह रोयी—मधु के पैरों पर पड़ी। "बाबू मेरे पति को सज़ा न होने दीजिए। मेरे परिवार की रक्षा कीजिए।" उसके सामने गिड़गिड़ायी।

मधु उसको आश्वासन देकर सैनिकों के साथ राजा के पास आया। कैद में पड़े श्यामसिंह को उसने पहिचाना। श्यामसिंह भी अपना अपराध मान गया। उसकी गरीबी कितनी भयंकर थी, यह देखकर वह जोर से रोया।

श्यामसिंह के लिए तो नहीं, पर पद्मा के लिए, जो बिचारी कुछ भी न जानती थी। मधु ने राजकुमार से कहा—"श्यामसिंह को सज़ा मत दीजिए। आपको आपत्ति न हो, तो उसकी सज़ा मैं भुगत लूँगा। वह लड़की बहुत अच्छी है। अभी अभी अपना घर बसाने आई है। पति के साथ सुखपूर्वक रहने के लिए जाने कितने सपने देख रही है। मैं अपनी हज़ार मुहरें उन्हें ही देना चाहता हूँ। एक को कष्ट पहुँचाना आसान है पर किसी को सुख पहुँचाना बहुत कठिन है।"

मधु की बात पर राजकुमार ने श्यामसिंह को छोड़ ही न दिया बल्कि उसे बहुत-सा धन देकर पत्नी के साथ घर गृहस्थी बसाने के लिए भेज दिया।

मधु श्यामसिंह को अपने घर ले गया उसे धन सौंपकर कहा—"अब तक जो किया सो किया कम से कम अब समझदार बनकर रहो। तुम्हारी पत्नी हीरे जैसी है।" मधु ने उसे समझाया।

(अगले अंक में एक और घटना)

क्या भला? क्या बुरा?

चीन में एक बूढ़ा रहा करता था। उसके पास एक घोड़ा था। एक दिन वह घोड़ा कहीं चला गया। अड़ोस पड़ोस के लोगों ने आकर उसे ढाढ़स दिया।

सब सुन बूढ़े ने कहा—"यह भी शायद मेरे भले के लिए ही है।" जैसे उसने कहा था कुछ वैसा ही हुआ। जब उसका घोड़ा वापिस आया तो साथ एक नया घोड़ा भी लेता आया।

अड़ोस पड़ोस के लोगों ने आकर बूढ़े को बधाई दी। पर बूढ़े ने कहा—"सम्भव है इससे कुछ नुकसान ही हो।"

इसके कुछ दिन बाद बूढ़े का लड़का जब नये घोड़े पर सवारी कर रहा था, तो वह गिर पड़ा और उसका पैर टूट गया।

फिर अड़ोस पड़ोस के लोगों ने आकर उसके प्रति सहानुभूति प्रकट की। बूढ़े ने सब सुनकर कहा—"शायद यह भी मेरे भले के लिए हुआ है।"

ठीक उसी समय हूणों से युद्ध प्रारम्भ हुआ। जिनके हाथ पैर ठीक थे, उनको सेना में जबर्दस्ती भरती कर लिया गया। सब युद्ध में मर गये। पर बूढ़े का लंगड़ा लड़का बचा रहा।

बे अक़्ली के काम

बाबा जब घर आया, तो बच्चे सब मिलकर बाबू का मज़ाक कर रहे थे।

"क्यों भाई, सब उसे मिलकर तंग कर रहे हो! आओ बेटा, बताओ बाबा को क्या हुआ!" बाबा ने पूछा।

बाबू ने न बताया कि उसकी क्या तकलीफ़ थी। उसने कहा—"जाओ, मैं नहीं आऊँगा, मैं नहीं बताऊँगा।"

तब बाबा ने दूसरे बच्चों से पूछा—"क्या भाई, बात क्या है!"

हम सब मिलकर आँख मिचौनी खेल रहे थे। बाबू ने ज़िद की कि वह भी खेलेगा। हमने कहा कि भाई तुम नहीं जानते, पर उसने न सुनी। खैर, बड़े लड़कों ने उसे भी आने दिया। वह छुपने की जगह खोजता "चोर" से कहता गया, "अभी न आना" आखिर बाबू एक टोकरे के पीछे छुप गया और फिर चिल्लाया—"अब आ सकते हो।"

उसके चिल्लाने से चोर जान गया कि वह कहाँ छुपा था। इसलिए सब उसे देखकर हँस रहे थे।

"यही न!" कहकर बाबा बैठ गया। बाबू को गोदी में बिठाकर, बाबा कहने लगा—"अरे ठीक तुम्हारी तरह एक समुद्री जन्तु है। उसके पैर, मूँछ और सिर होता है। जब मछियारे आते हैं तो वह भी तुम्हारी तरह छुप जाता है। अपने पैरों को वह सिर में छुपा लेता है, और सिर को पेट में छुपा लेता है। यही नहीं, कहीं मछियारे जान न जाय कि वह कहाँ है, वह काला-सा द्रव उगलता रहता है।

फिर क्या है! समुद्र में जहाँ कहीं मछियारे वह काला द्रव देखते हैं वहाँ जाल डालकर उसको पकड़ लेते हैं।

"बाबा, उनकी बुद्धि नहीं होती। मनुष्यों की बुद्धि की तुलना में जन्तुओं की बुद्धि कम होती है। यह हमारी पुस्तक में लिखा है। जानते हो, कठफोड़ा क्या करता है!" एक बड़े लड़के ने उठकर पूछा।

"नहीं तो, मुझे नहीं मालूम। बताओ क्या करता है।"

"ताकि कोई अंडे ले न जाये वह चोटी की टहनी पर घोंसला बनाता है। जब बच्चे हो जाते हैं तो कहीं ऐसा न हो कि वे उतनी ऊँचाई से गिर गिरा जायें कुछ नीचे हटकर वह घोंसला बनाता है। ज्यों ज्यों बच्चे बड़े होते जाते हैं, त्यों त्यों उसका डर अधिक होता जाता है और वह और नीचे घोंसला बनाता जाता है। और आखिर इतने नीचे घोंसला बनाता है कि आने जानेवाले उसके बच्चे बड़ी आसानी से ले जाते हैं। वह इतना भी नहीं जानता।" बड़े लड़के ने कहा।

बाबा ने बाबू को गोदी से हटाया। सुंघनी लेकर कहने लगा—"अरे पगलो, मनुष्य भी यही करता है। फिर अगर जन्तु और पक्षी करते हैं तो इसमें क्या आश्चर्य है!"

"क्या मनुष्यों में भी बाबा इतने बे-अक़्ल होते हैं!" बच्चों ने पूछा।

बाबा सुनाने लगा—"जन्तु और पक्षी तो इसलिए बे-अक़्ली करते हैं, क्योंकि उनमें बुद्धि नहीं होती। मनुष्य बुद्धि के होते हुए भी बे-अक़्ली करते हैं। बेवकूफ़ी की बातें करते हैं।"

"वह कैसे?" बच्चों ने पूछा।

बाबा कहने लगा—"कभी किसी ने रास्ते के किनारे ही यात्रियों के लिए कुँआ खुदवाया। क्योंकि वहाँ आसपास पानी न था। सब ने उसकी प्रशंसा की और कहा कि उसने ऐसी जगह ही कुँआ खुदवाया था जहाँ कि उसकी ज़रूरत थी। यह सुना न! थोड़े दिनों बाद अन्धेरे में कोई चलता चलता कुँए में गिर पड़ा। तब क्या था! सब ने उस कुँए को खुदवाने वाले को जी भर गालियाँ दीं। कई ने कहा कि वहाँ कुँआ खुदवाना ही गल्ती थी, कई ने कहा कि यदि वहाँ कुँआ न खुदवाया जाता तो अच्छा होता। देखा!"

"अगर दस आदमी दस तरह से बातें करते हों तो क्या यह कहना ठीक है कि मनुष्यों में अधिक मूर्ख हैं।" बड़े लड़के ने कहा।

"अरे, कोई जान बूझकर मूर्ख का सा व्यवहार नहीं करता। मामूली अक्लवाले ही कभी कभी किसी किसी बात पर किसी कारण से बेवकूफ़ी करते हैं। तुम्हें कुछ उदाहरण सुनाता हूँ, सुनो।" बाबा ने बच्चों को देखते हुए कहा।

"एक देश में एक राजा को मालूम हुआ कि किसी प्रान्त में बाघ अधिक थे। वह राजा बड़ा जालिम था। लोग उसका नाम सुनते ही डर के कारण काँपते थे। जहाँ जहाँ ज़रूरत होती, वहाँ वहाँ वह अपनी आज्ञा पत्थरों पर खुदवा देता। उसकी प्रजा उन आज्ञाओं के अनुसार चला करती। अब चूँकि बाघों का शोर अधिक हो गया था, इसलिए राजा ने बाघों के लिए आज्ञा खुदवा दी—"जो इस जंगल में बाघ हैं वे तुरत कहीं और चले जायें।" उस पत्थर को वहाँ गड़वा दिया, जहाँ बाघ अधिक थे। अब क्या था! राजा की आज्ञा थी, लोग उन जंगलों में गये और बाघों द्वारा मार दिये गये। क्या राजा की आज्ञा मूर्खतापूर्ण न थी! क्यों उसने ऐसा किया! इसी घमंड में कि वह बहुत बड़ा शासक है और कुछ भी नहीं।"

"एक और उदाहरण सुनाओ, बाबा।"

एक और देश में एक मन्त्री था। वह हमेशा प्रजा के उपकार की बातों में लगा रहता। जो कोई प्रजा के उपकार की बात सुझाता, वह उनको ईनाम देता, उनका गौरव-सत्कार करता। मन्त्री की प्रशंसा

पाने के लिए एक कर्मचारी ने उसके पास आकर कहा—"हुजूर, शहर के पूर्व के तालाब को यदि सुखा दिया गया, तो असानी से उसके दो हज़ार एकड़ों में खेती की जा सकती है।

मन्त्री ने पूछा—"बात तो ठीक है। पर तालाब के पानी का क्या किया जाये!"

कर्मचारी ने थोड़ी देर सोचकर कहा—"बगल में एक और तालाब खुदवायेंगे और पानी उसमें छोड़ देंगे। देखी उसकी सूझबूझ, तुम भी हँस रहे हो। पर वह सचमुच मूर्ख न था, मन्त्री की प्रशंसा पाने की चिन्ता में ही वह यह मूर्खतापूर्ण सुझाव दे रहा था और कुछ नहीं!"

बाबा को चुप पा, बच्चों ने कहा—"बाबा, कुछ और कहानियाँ सुनाओ।"

"अरे ऐसी कहानियाँ....जितने मेरे सिर के बाल हैं, उतनी हैं।"

बाबा ने सिर खुजाते हुए धीमे धीमे यों कहना शुरु किया। एक राजा के यहाँ एक नौकर था। वह विचारा यह न जानता था कि अदरख कहाँ से आती है। एक दिन किसी और नौकर से बातों बातों में उसने पूछा कि अदरख के पेड़ कहाँ अधिक होते हैं?

दूसरे ने कहा कि अदरख पेड़ पर नहीं लगता, पर ज़मीन के अन्दर होता है।

पर पहिला नौकर न माना, उसने कहा कि गलत है, उसने सौ रुपये का बाजी भी लगाई। उसने पाँच दस से पूछा। उन सबने यही कहा कि अदरख ज़मीन के अन्दर होती है। किसी ने न कहा कि वह पेड़ पर लगता था, तब क्या था! पहिला नौकर हार गया, उसने दूसरे को सौ रुपये देते हुए कहा—"भले ही बाजी

हार जाऊं, पर अदरख होने को पेड़ पर होता है। कोई नहीं जानता।" यह आदमी वैसा था, जो कहा करता था कि जो खरगोश उसने पकड़ा था उसकी तीन ही टांगें थीं।

ऐसे लोग बिना अनुभव के बेवकूफी की बातें करते हैं, बेअक्ली के काम करते हैं। एक और कहानी सुनाता हूं, सुनो एक राजा के दो लड़के थे। एक दिन दोनों में वाद विवाद हुआ। चावल कहां से आता है? एक ने कहा कि बोरों में से। एक ने कहा—"मटकी में से।" उन दोनों में से किसी एक ने भी खेत नहीं देखे थे। वे भला क्या जानेंगे!

इस प्रकार की और एक कहानी है। एक चित्रकार ने एक चित्र बनाया, उनमें दो बैल लड़ रहे थे। उनका पैर उठाकर, सिर भिड़ाकर, पूंछ उठाकर, लड़ना बहुत ही स्वाभाविक है—कहकर सबने उसकी प्रशंसा की।

चित्रकार गर्व से फूल उठा। सब ठीक था, एक दिन उस चित्रकार का चरवाहा अपने मालिक के पास गया। दीवार पर बैलों का चित्र देखकर हँसा।

चित्रकार ने उससे कहा—"क्या तुम्हें भी यह चित्र समझ में आ रहा है! क्या वे असली बैलों की तरह ही हैं!" चरवाहे ने कहा—"होने को तो वे बैलों की तरह ही हैं। पर जैसा वे कर रहे हैं, वैसा असली बैल नहीं करते! असली बैल लड़ते समय पूँछ उठाते नहीं, दबा लेते हैं।" चित्रकार यह नहीं जानता था, पर यह जानने के बाद, क्या उसने चित्र में कोई परिवर्तन किया!

कुछ और ऐसे काम करने लगते हैं, जिन्हें वे जानते बानते नहीं। इसके लिए भी कहानी सुनाता हूँ। एक गाँव में एक अन्धा रहा करता था। उसको देखकर उसके एक सम्बन्धी को बड़ी दया आई।" "अरे, इस बिचारे ने सूर्य भगवान को देखा ही नहीं है। कम से कम इसे यह तो बताया जाये। उसने कहा—"अरे समझ लो कि सूर्य इस तरह घंटे के समान होता है।" यह कहकर उसने घंटा बजाया। उसके बाद जब कभी अन्धा घंटे की ध्वनि सुनता, वह पूछता—"क्या यही सूर्य है!" उसके बन्धु को और भी दुख हुआ। "नहीं, नहीं, सूर्य इस प्रकार चमकता है।" कहकर उसने अन्धे के हाथ में मोमबत्ती देकर, उसे टटोलने के लिए कहा। कुछ दिनों बाद अन्धे के हाथ में एक बाँसुरी आई। उसने पूछा—"क्या यही सूर्य है!" क्या गल्ती अन्धे की है! नहीं तो उस बन्धु की, जिसने अन्धे को सूर्य का वर्णन करने का प्रयत्न किया था!

"और कहानियाँ सुनाओ, बाबा।" बच्चे चिल्ला रहे थे कि माँ ने अन्दर से कहा—"अरे, बाबा को नहाने दो न!"

घमंडी

एक गरीब जंगल जाकर, लकड़ियाँ काटकर, गट्ठर बनाकर, उन्हें कस्बे मे
बेचने आया। कस्बे के बाजार में लोग अधिक थे। गरीब का लकड़ियों का बोझ
भारी था। इसलिए वह जोर से चिल्लाता "हटो, हटो" बाजार में जा रहा था

लोग उसका चिल्लाना सुनकर हटते जाते थे। परन्तु एक घमंडी न हटा
उसके कपड़े लकड़ियों से लगकर फट गये। उसे बड़ा गुस्सा आया। वह उस
गरीब को न्यायाधिकारी के पास घसीट कर ले गया। उसने शिकायत की कि
गरीब लकड़हारे ने उसके कपड़े फाड़ दिये थे।

न्यायाधिकारी ने गरीब से बहुत प्रश्न किये। परन्तु गरीब चुपचाप खड़ा
रहा। आखिर न्यायाधिकारी ने ऊब कर पूछा—"क्यों भाई, क्यों इस गूँगे को
मेरे पास लाये हो?"

"हुजूर, हमेशा यूँ ही यह रुप बदलता रहता है। गली में मैंने स्वयं इसे
चिल्लाता सुना है "हटो, हटो।" घमंडी ने कहा।

"यह बात है, तो उसका चिल्लाना सुनकर भी यदि आप न हटे, तो यह
आपकी गल्ती है। आपकी शिकायत रद्द कर दी जाती है।" न्यायाधिकारी ने कहा

कृताकृत

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। पेड़ के पास जाकर शव को उतार कर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा।

तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम्हें देखकर मुझे सन्तोष भी कभी कभी होता है। तुम कृताकृत की तरह नहीं हो, जो काम शुरु किया है उसे अन्त तक किये बिना, लगता है, आराम नहीं लोगे। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं कृताकृत की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

कृताकृत नाम का एक ब्राह्मण था। वह वेदों का अध्ययन छोड़कर, कुलभ्रष्ट होकर हमेशा जुआखोरों, पियक्कड़ों, गुन्डों के संग घूमा फिरा करता। रात के समय में

श्मशान में घूमता। क्षुद्र उपासकों का परिचय करके, उनकी सहायता से पेट पालता। बहुत ही निकृष्ट जीवन व्यतीत कर रहा था।

एक दिन रात को जब वह श्मशान में गया, तो वहाँ शव जल रहे थे। भूत नृत्य कर रहे थे। तब एक बेताल ने कृताकृत के पास जाकर पूछा—"क्या मुझे नर माँस लाकर दोगे? या कहते हो कि मैं तुम्हें ही खाऊँ।"

"नर माँस लाने को तो ला दूँगा, पर उसके लिए मुझे क्या दोगे?" कृताकृत ने बेताल से पूछा।

"यदि तुमने स्वस्थ ब्राम्हण का माँस लाकर दिया तो मैं तुम्हें मृत संजीवी मन्त्र बताऊँगा।" बेताल ने कहा।

"मन्त्र ही काफी नहीं है। यदि तुमने जुए में जीतने के लिए ऐसा पाँसा भी दिया, जो मुझे हमेशा जिताये, तुम्हारा चाहा हुआ ब्राम्हण का माँस लाकर दूँगा।" कृताकृत ने भावताव किया।

"अच्छा, ऐसा ही होगा!" बेताल ने कहा।

कृताकृत स्वस्थ ब्राम्हण को मारकर उसका माँस लाकर बेताल को देने के लिए निकल पड़ा। परन्तु उसे ऐसा लगा कि वह काम वह न कर सकेगा। इसलिए उसने अपने भाई को ही मार दिया और उसके माँस को आधी रात के समय श्मशान में ले आया। बेताल ने अपने वचन के अनुसार अजेय पाँसा और मृत संजीवी मन्त्र का उपदेश भी दिया।

फिर एक दिन कृताकृत मृत संजीवी मन्त्र को परखने के लिए एक चंडाल के शव को आधी रात के समय श्मशान में ले गया और वहाँ मृत संजीवी मन्त्र पढ़ने लगा।

मन्त्र आधा ही उसने पढ़ा था कि शव का बायाँ हाथ, बायाँ पैर धीमे धीमे हिलने लगा, बायीं आँख खोलकर वह इधर उधर देखने लगा। परन्तु शव का दायाँ भाग मृत-सा ही रहा।

इस भयंकर दृश्य को देखकर कृताकृत को भय लगने लगा। वह शेष मन्त्र भूल गया था। झट उठा और भागने लगा। शव भी उठा और एक पैर से लंगड़ाता लंगड़ाता उसके पीछे चला।

कृताकृत भागा भागा घर गया। दरवाजे बन्द करके काँपता, दुशाला ओढ़कर जल्दी ही सो गया। पर जब रात में उसकी नींद उचटी तो उसने देखा कि दरवाज़ा खोलकर लंगड़ाता लंगड़ाता बायीं आँख को इधर उधर फेरता "ऊनाधिकाकृतंकृतं" कहता वह आ रहा था।

कृताकृत झट बिस्तरे पर से उठा, एक और दरवाज़े से बाहर भागा। एक घोड़े पर सवार हो बड़ी तेज़ी से दूर देश चला गया। वहाँ एक बड़े नगर में रहने लगा और सोचने लगा कि चंडाल के शव से पीछा छूट गया था। वहाँ उसने अपने अजेय पाँसे से जुए

में सब को हराया। खूब पैसा कमाकर समस्त भोगों का अनुभव करता और दूसरे जुआखोरों को दावत देता वह आराम से समय काटने लगा।

एक दिन जब वह एक जुआखोर के घर जुआ खेल रहा था, तो आधा जीता चंडाल का शव एक पैर से लंगड़ाता, एक आँख इधर उधर फेरता, "ऊनाधिकाकृतंकृतं" कहता कहता वहाँ आया।

कृताकृत उसे देखकर चिल्लाया। फिर एक और दरवाजे से बाहर निकलकर, नगर से भाग निकला और जंगल के रास्ते एक और नगर में पहुँचा। जो उस घर में उसके साथ थे उस भयंकर दृश्य को देखकर सहसा मर गये। डर के मारे उनकी दिल की धड़कन बन्द हो गई थी।

इस नये शहर में कृताकृत कुछ समय तक भेस बदलकर लुका छुपा इधर उधर फिरता रहा। फिर उसमें कुछ हिम्मत आई। जुआ खेलकर पैसा कमाने लगा। और पहिले की तरह आराम से रहने लगा।

एक दिन कृताकृत कोठे पर अपनी प्रेयसी के पास बैठा था। चंडाल का शव

एक पैर से लंगड़ाता एक आँख से अंगारे बरसाता "ऊनाधिकाकृतंकृतं" जोर से चिल्लाता चिल्लाता वहाँ आया।

यह दृश्य देखकर कृताकृत की प्रेयसी के प्राण भय से जाते रहे। शव से बचने के लिए कृताकृत भी कोठे पर से नीचे कूदा और मर गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। शव क्यों "ऊनाधिकाकृतंकृतं" कहा करता था! इसका क्या मतलब था! अगर तुमने जान बूझकर न बताया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर बिक्रमार्क ने कहा—"ऊनाधिकाकृतंकृतं" का अर्थ है, कम किया गया, अधिक किया गया, या कुछ भी न किया गया। इस बात का अर्थ साफ़ साफ़ मालूम ही पड़ रहा है। जो प्रारम्भ किये हुए कार्य को पूरा करने का साहस नहीं रखते, वे या तो अधिक करते हैं, नहीं तो कम। इसलिए वे कहीं के भी नहीं रहते। उत्तम पुरुष नीच काम शुरु ही नहीं करते। पाप कृत्य करने का साहस करनेवाले उन्हें अन्त तक करके उनका फल इसी लोक में अनुभव करते हैं। डरपोक पापकार्य शुरु तो करते हैं, पर उनको अन्त तक नहीं करते। वे कहीं के भी नहीं रहते। यही शव की बात का अर्थ है। और यही वह हमेशा कहता आ रहा था।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर फिर पेड़ पर जा बैठा।

[कल्पित]

भाई-बहिन

[२]

जुबेदा ने कूतल कुलूब को जैसे-तैसे, नौकरों द्वारा दफ़नवा तो दिया था, पर अब उसके सामने एक समस्या थी—खलीफ़ा जल्दी ही युद्ध से वापिस आयेगा, कूतल कुलूब के बारे में पूछेगा, तब उसको क्या जवाब दिया जाय।

इस बात पर उसने बूढ़ी दासी से सलाह माँगी। वह बुढ़िया बड़ी चालाक थी, सब चाल पैंतरें जानती थी, लोमड़ी थी। उसने रानी से कहा—"इस समस्या को सुलझाने का बस एक ही उपाय है। होने को तो हज़ार उपाय हैं। पर एक सब से अच्छा उपाय है। बढ़ई से एक लकड़ी का पुतला बनवाइये, उसे बढ़िया कीमती ताबूत में रखवाइये। आप, अपने नौकर-चाकरों के साथ महल में ही विधि के अनुसार उसे दफ़नवा दीजिए।

"जब खलीफ़ा उसके बारे में पूछें, तो कहना कि वह मर गई थी और आपने बिना किसी कमी के वैभव के साथ उसको दफ़नवा दिया था और बढ़िया क़ब्र बनवादी थी।"

"वे आयेंगे क़ब्र पर दो-चार आँसू बहायेंगे और कुरान पढ़वायेंगे। यदि उनको सन्देह होगा, तो क़ब्र खुलवायेंगे। पर उसमें ताबूत तो होगा ही और उसमें बढ़िया कपड़े पहिने काठ का पुतला भी होगा। क्योंकि शव को छूना ख़राब समझा जाता है। खलीफ़ा पास नहीं

नमाज़ भी पढ़ी। महल में सब जगह काले कपड़े पहिने गये। नौकरों ने भी बढ़िया कपड़े पहिने। सारे महल में यह बात फैल गई कि कूतल कुल्ब मर गई थी। मसूर जैसे खलीफ़ा के मित्रों को भी यह विश्वास हो गया।

खलीफ़ा युद्ध से वापिस आया। यह पता लगते ही कि कूतल कुल्ब मर गई थी, वह ठूँठ की तरह नीचे गिर गया। होश आने पर उसने अपनी प्रियतमा की कब्र देखनी चाही।

"प्रेम के कारण मैंने उसकी कब्र यहीं महल में ही बनवाई है।" जुबेदा ने कहा। खलीफ़ा बिना कपड़े बदले ही कब्र के पास गया। वहाँ उसने कालीन बिछे हुए देखे, मोमबत्तियाँ और मशालें देखकर, उसने अपनी कृतज्ञता दिखाई और अपने महल वापिस आ गया।

पर शीघ्र ही उसे तरह तरह के सन्देह सताने लगे। जब तक उसने ताबूत उठवा कर न देखा, तब तक उसका सन्देह न गया, फिर उसने एक हफ्ताह तक वहाँ कुरान पढ़वाया। उसने भी अपनी प्रियतमा के लिए आँसू

जायेंगे और आपकी समस्या यों हल हो जायेगी।"

रानी खुश हुई। उसने खुश होकर दासी को कपड़े और सोना आदि भी दिये।

फिर उसकी सलाह के मुताबिक एक काठ का पुतला बनवाया। उसे गहने पहिनवाये। बढ़िया कपड़े पहिनवाये। मुँह ढापकर, ताबूत में रखवाकर, मोमबत्ती मशालों के साथ, उसको गड़वा दिया।

उसने उस पर कब्र भी बनवा दी। इस संस्कार में ज़नाने की सब स्त्रियाँ भी उपस्थित थीं। उन्होने कालीनें बिछाकर

बहाये। अन्तिम दिन सवेरे से अगले दिन सवेरे तक, कुरान पठन लगातार होता रहा।

उसके बाद सब अपने अपने रास्ते चले गये। क्योंकि वह कई दिनों से रो रहा था और पिछले कई दिनों से वह सोया भी न था, खलीफ़ा महल वापिस आते ही तुरत सो गया।

एक घंटे बाद जब उसकी नींद उचटी, तो खलीफ़ा को पास बैठी दासियों की कानाफूसी सुनाई दी। वह आँखें खोले ही उनकी बातें सुनता रहा।

"खलीफ़ा की भी क्या हालत है! उन्होंने क्यों बेकार कब्र के पास आँसू बहाये! उसमें है क्या! काठ का पुतला ही तो है!"

"असली शव को तो जुबेदा रानी ने श्मशान में गड़वा दिया था न! सुनते हैं कि जुबेदा के कारण कूतल कुल्ब की इतनी बुरी तरह मौत हुई।"

"खुदा की मेहरबानी से जैसे-तैसे वह बच गई। इतने दिन घानी नाम के डमास्कस के व्यापारी के पास छुपी-छुपी रह-रही है। यह बात जुबेदा रानी भी अब जान गई है। वहाँ वे दोनों मज़े में हैं, पर यहाँ खलीफ़ा दुःख में झुलसे जा रहे हैं।"

यह सुनते ही खलीफ़ा सहसा उठा। पलंग से उठकर चिल्लाया—"जाफर, कहाँ है जाफर!" मन्त्री जाफर के आते ही उसने उससे कहा—"तुम तुरत जाकर, डमास्कस के व्यापारी घानी के घर को घेर लो और वहाँ से मेरी कूतल कुल्ब को छुड़वाकर लाओ और उस घानी को पकड़ कर लाओ। उसकी बोटी बोटी कटवानी है।"

जाफ़र ने सिपाहियों और कोतवाल को बुलवाया। यह मालूम करके कि घानी का घर कहाँ था, वह खलीफ़ा के हुक्म की तामील करने निकला।

जब सिपाही वगैरह पहुँचे, तो घानी ने कूतल कुल्ब के साथ खिड़की में से सिपाहियों को अट्टहास करते देखा। "अब आफ़त आ पड़ी है। खलीफ़ा तुम्हें जिन्दा न छोड़ेंगे। जाओ, भाग जाओ।" वह चिल्लाई।

सैनिकों ने तब तक उसका घर घेर लिया था, उसे न सूझा कि कैसे भागा जाये। कूतल कुल्ब ने ही उपाय बताया। उसने उसके कपड़े फाड़ दिये। चीथड़े पहिनवाकर, एक घड़े में डालकर, उस घड़े को उसके सिर पर रख कहा—"इस तरफ़ से बाहर जाओ। गुलाम जानकर, सिपाही तुम्हें न रोकेंगे। मेरे बारे में फ़िक्र न करो। खलीफ़ा मेरा कभी नुक्सान नहीं करेंगे।"

जैसा कि उसने कहा था सिपाहियों ने घानी को बिना रोके जाने दिया। उसके जाते ही जाफ़र, घोड़े पर सवार होकर उस घर में पहुँचा। जब वह घर के अन्दर गया, तो कूतल कुल्ब सज धजकर वहाँ बैठी हुई थी। जाफ़र को देखते ही उसने उठकर सलाम किया।

"मुझे हुक्म है कि घानी को पकड़कर ले जाऊँ। क्या तुम जानती हो, वह कहाँ है?" जाफ़र ने पूछा।

"जानती हूँ। कुछ ही समय पहिले वह अपनी माँ और बहिन को देखने डमास्कस चला गया है। इससे ज्यादह मैं कुछ नहीं जानती। यह सन्दूक मेरा है। मेरा सब कुछ इसमें है। इसलिए इसको महल होशियारी से पहुँचवाइये।"

जाफ़र ने कुछ लोगों को सन्दूक ले जाने के लिए कहा। उसने काबूल को अपने खलीफ़ा के पास आने के लिए कहा। फिर उसने सिपाहियों से कहा—"इस घर को लूटो और आग लगा दो। यह खलीफ़ा का हुक्म है।"

वह उसको साथ ले खलीफ़ा के पास गया, उससे कहा कि घानी डमास्कस चला गया था। यह सन्देह करके कि उसकी प्रियतमा पहिले ही घानी को अपने को सौंप चुकी थी खलीफ़ा ने अंगरक्षक मस्तूर को आज्ञा दी कि उसे काली कोठरी में डाल दिया जाय।

अब घानी को पकड़कर सज़ा देनी थी। उसको खोजने के लिए घुड़सवारों को भेजते हुए, अपने सामन्त डमास्कस के सुल्तान को एक चिट्ठी भी लिखकर खलीफ़ा ने भेजी। उसने लिखा कि डमास्कस का युवक है। अय्यूब का लड़का है। वह व्यापार पर बगदाद आया। मेरी प्रिय स्त्री से उसने सम्बन्ध स्थापित किये। मेरे क्रोध से बचने के लिए वह डमास्कस भाग गया है। वह अपनी माँ और बहिनों के पास छुप गया है। उसको पकड़कर भेजा गया, तो उसको ठीक तरह सज़ा दी जायेगी। जिस किसी ने

उसको आश्रय दिया हो, उसके घर को जला दो और उसको नगर से बाहर भेज दो।"

एक सप्ताह बाद यह चिट्ठी डमास्कस के सुल्तान के पास पहुँची। उसे पढ़ते ही उसने कहा—"जो कोई घानी का घर लूटना चाहे, वह लूट सकता है।" यह घोषणा शहर भर में करवा दी जाये।

वह कुछ सिपाहियों को लेकर घानी के घर पहुँचा। उसके किवाड़ खटखटाये। घानी के बहिन फितना ने किवाड़ खोले। सुल्तान को देखते ही परदा करके, वह अपनी माँ से कहने गई।

घानी की माँ को जब लड़के की खबर न मिली, तो यह सोचकर कि वह मर मरा गया था, उसके बाप की छोटी-सी कब्र बनाकर, बिना कुछ खाये, पिये, रात-दिन वहीं पड़ी पड़ी रोती रहती थी। यह जानते ही कि सुल्तान आये हैं। उसने अपनी लड़की से कहा—"सुल्तान को इधर तशरीफ लाने के लिए कहो।"

सुल्तान जहाँ वह थी, आया। "घानी को पकड़कर, खलीफ़ा के पास भेजने के लिए आया हूँ।"

"क्या बताऊँ हुजूर! मेरा लड़के घानी को हमें छोड़कर गये हुए एक साल हो गया है, हम नहीं जानते कि वह कहाँ चला गया है।"

खलीफ़ा दयालु था, पर उसके सामने खलीफ़ा के हुकम के तामील करने के सिवाय और कोई रास्ता न था। उसने उनके घर को मिट्टी में मिलवा दिया। उनके कपड़े ले लिये। उन्हें नगर से बाहर भेज दिया। वे भी घानी की तरह बेआसरे हो गये।

(अभी है)

दोस्त

सफेद झूठ
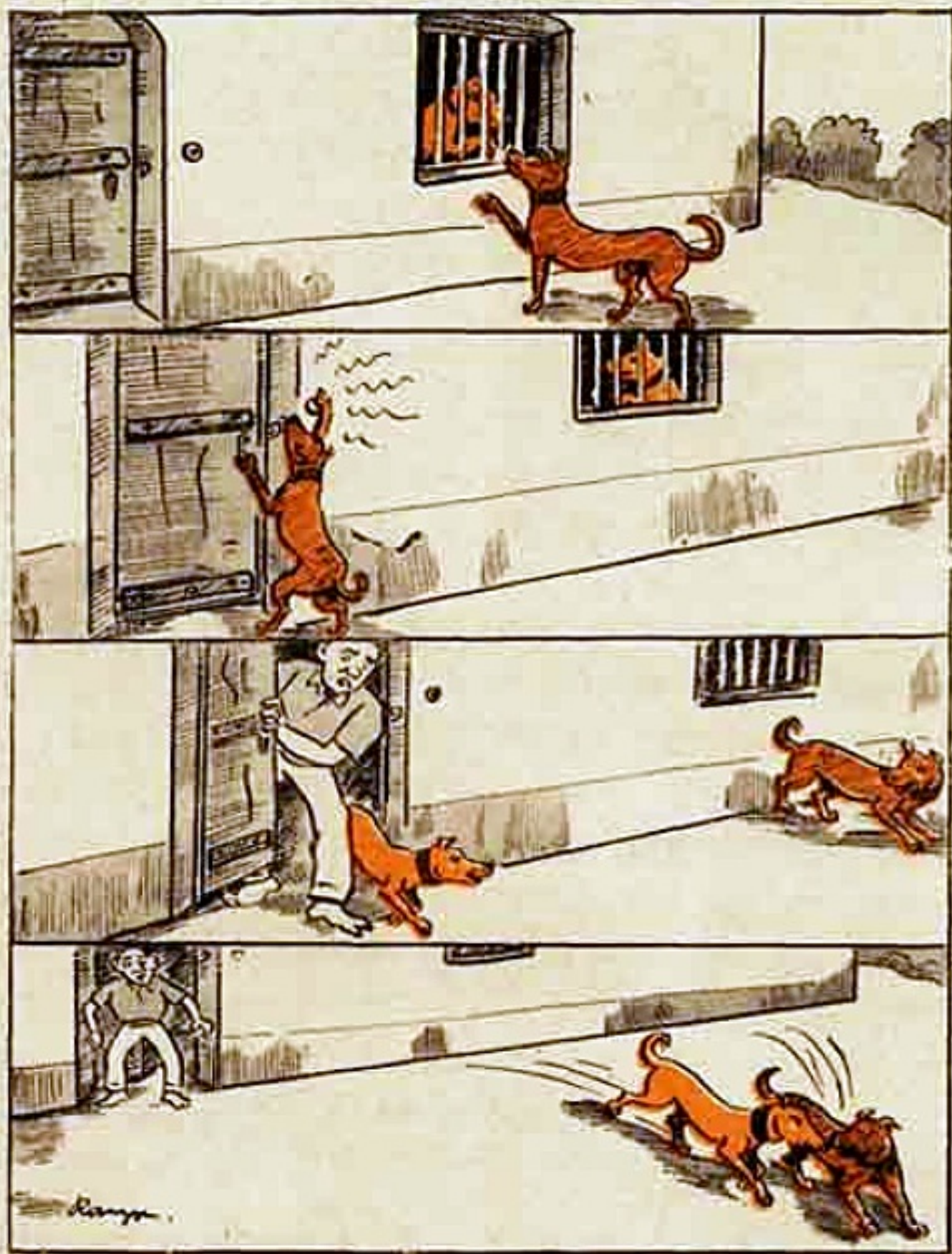
बलरामपुर में जगन्नाथ नाम का एक व्यापारी था। उसी गाँव में रामलाल नाम का एक किसान भी था। रामलाल को घर के खर्च के लिए पचीस रुपयों की ज़रूरत हुई। यदि वह किसी से यह माँगता भी, तो वह जानता था कि उसका विश्वास करके कोई भी इतनी रकम न देगा। रामलाल ने जगन्नाथ को फुसलाकर पैसा लेने की सोची।

"बाबू जगन्नाथ, जान पर आ पड़ी है। अगले सप्ताह आज के दिन आप जो सूद माँगेंगे, उसके साथ आपका रुपया वापिस कर दूँगा। जरा पचीस रुपये तो दो।" रामलाल उसके सामने गिड़गिड़ाया।

जगन्नाथ आसानी से किसी को पैसा न देता था और उसे सन्देह भी था कि रामलाल सूद तो क्या असली रकम भी हजम कर जायेगा। इसलिए उसने इधर उधर की मीठी मीठी बातें बनाकर रामलाल को भेज देना चाहा।

"रामलाल! तुम तो कभी कुछ माँगते न थे, आज माँग रहे हो। क्या करूँ! जो कुछ मेरे पास था, वह व्यापार में लगा हुआ है। नहीं तो मैं दे देता। बुरा न मानना।" जगन्नाथ ने कहा।

रामलाल जान गया कि जगन्नाथ उसको पैसा देना न चाहता था और ऊपर से यूँहि चिकनी चुपड़ी कर रहा था। "खैर एक और जगह देखूँगा।" वह यह कहकर चला गया। पर कुछ भी हो, उसने जगन्नाथ से रुपये ऐंठने की ठानी। वह उठते बैठते, बस इसी के बारे में सोचने

लगा। आखिर उसे एक बात सूझी। वह जगन्नाथ की दुकान पर गया।

जगन्नाथ दुकान में बैठा था। रामलाल ने उसके पास आकर पूछा—"पाँच धाई कितने होते हैं?" यह सोच कि रामलाल गिनती न जानकर यों पूछ रहा था। जगन्नाथ ने कहा—"पचास" "वाह, तुम भी खूब समझदार हो, साठ न।" रामलालने ज़ोर से कहा। "वाह, तुम भी खूब हो....पचास" जगन्नाथ ने कहा। रामलाल ने ज़ोर से फिर कहा—"ज़रा सम्भलकर बात करो, साठ।" जगन्नाथ और ज़ोर से चिल्लाया "पचास"

इस तरह जगन्नाथ और रामलाल को पचास और साठ चिल्लाता देख, आस पास के लोग जमा हो गये। उन्होंने पूछा—"क्यों भाई, क्या बात है?"

"देखिये, यह भलामानस मुझे धोखा देने की कोशिश कर रहा है। मैंने इसके पास साठ रुपये रखवाये थे। जब ज़रूरत पड़ने पर मैंने माँगे, तो कहता है पचास" रामलाल ने कहा, जैसे सचमुच उसका रुपया जा रहा हो।

जगन्नाथ हका बका रह गया। "अरे वाह, तुमने मेरे पास रुपये रखवाये थे!

कितना अन्याय है ! यह सब झूठ है ।" जगन्नाथ ने जो कुछ गुज़रा था वहाँ जमा हुए लोगों से कहना चाहा ।

रामलाल ने जगन्नाथ को बात करने न दिया । "अरे जगन्नाथ यों झूठ न बोलो। अभी तक पचास पचास चिल्ला रहे थे और अब कह रहे हो कि कुछ भी नहीं है। दस रुपये हड़प लिए तो हड़प लिए। कम से कम पचास रुपये तो दे। अच्छा सबक सिखाया है तुमने। कभी किसी के पास पैसा न रखवाऊँगा मैं। इन दस रुपयों से तुम कोई अमीर नहीं हो जाओगे। दो।" रामलाल ने कहा।

वहाँ जमा हुए लोगों को भी रामलाल की बात पर विश्वास हो गया। उन्होंने सोचा कि सचमुच रामलाल ने जगन्नाथ के पास रुपया रखवाया था।

"जगन्नाथ, जब उसने कहा कि उसने साठ रुपये रखवाये थे, तब तुमने कहा पचास और अब तुम कह रहे हो, पचास रुपये भी नहीं दोगे। तुम सारा रुपया हड़पना चाहते हो, यह भी क्या बात है ! कुछ तो सोचो। तुम सीधी तरह उसको पचास रुपये दे दो।" उन सब ने मिलकर फैसला किया।

यह सोच कि थोड़ी देर हुई तो वे फैसला देंगे कि साठ रुपये दे दो— जगन्नाथ ने पचास रुपये, रामलाल के हाथ में रख दिये।

देखा, तमाशा ! रामलाल वहाँ से चम्पत हो गया।

पचीस रुपये उधार न दिये थे, इसलिए वह उससे दुगना ऐंठ ले गया—जगन्नाथ बिचारा सोचने लगा।

भरत राम की आज्ञा पर उठा। जल का स्पर्श कर, राम को छूकर, उसने सब से इस प्रकार कहा—"आप सब सुनिये। न मैंने पिता से राज्य माँगा, न माता से ही। राम का वनवास मुझे पसन्द नहीं है। राम के बदले मैं चौदह वर्ष वनवास करूँगा। मेरे बदले राम को राज्य करने दीजिये। इस तरह पिता की आज्ञा का पालन भी हो जायेगा।"

यह सुन राम चकित हो गया। "इस प्रकार राज्य और वनवास का अदला-बदला कैसे पिता की आज्ञा का पालन हो जायेगा! यदि मैं वनवास छोड़कर राज्य करता हूँ, तो इससे बड़ी गल्ती न होगी। इन चौदह वर्षों के पूरे होते ही मैं और भरत मिलकर राज्य करेंगे।" राम ने कहा।

उपस्थित लोगों ने राम की बात पर और भरत की बात पर सन्तोष प्रकट किया। उन्होंने भरत से कहा—"जैसा राम ने कहा है, वैसा ही करो। उन्हें पिता का ऋण चुकाने दो।" यह सुन राम तो खुश हुए, पर भरत हताश हो गया।

आखिर उसने राम से उनकी पादुका माँगी। राम ने पादुकाओं को पहिनकर भरत को दी।

भरत ने सुवर्ण विभूषित राम की पादुकाओं की पूजा की। राम अपनी माताओं और अन्य लोगों को भेजकर अपनी पर्णशाला में वापिस आ गये।

भरत, राम की पादुकाओं को सिर पर रखकर, शत्रुघ्न के साथ रथ में सवार हुए। वशिष्ठ, नामदेव और अवाली आदि आगे आगे चले।

भरत वापिसी रास्ते में अपने आदमियों के साथ भरद्वाज के आश्रम में गया। उनको जो कुछ हुआ था, बताया। उनसे विदा लेकर आगे बढ़ा।

शृंगवेरपुर के रास्ते, वह अन्त में अयोध्या पहुँचा। जब वह अयोध्या की गलियों में से, रथ पर आ रहा था, तो उसे सारा नगर निष्प्राण सा लगा। उसने शत्रुघ्न से कहा—"अयोध्या की सारी शोभा राम के साथ ही चली गई है।"

भरत ने अपनी माताओं को अयोध्या में लाकर, वशिष्ठ आदि से कहा—"जब अयोध्या में राम नहीं हैं, मैं नहीं रह सकता, मैं नन्दी ग्राम चला जाऊँगा। वहाँ से ही राज्य काम देखता रहूँगा और राम के आने की प्रतीक्षा करता रहूँगा।"

भरत ने राम से कहा—"यदि तुम न हो, तो तुम्हारी पादुका ही संसार की रक्षा करेगी। मैं मुनि वेष पहिनकर, फल आदि खाकर, राज्य भार पादुकाओं को सौंप दूँगा और तुम्हारी प्रतीक्षा करता नगर के बाहर रहूँगा। चौदह वर्ष बाद तुम न आये, तो मैं अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा।"

राम इसके लिए मान गये। भरत का आलिंगन करके उन्होंने कहा—"तुम माता की रक्षा करो। उन पर क्रोध न करो। अब तुम जा सकते हो।" राम यह कहकर आँसू बहाने लगे।

मन्त्रियों ने भी इस व्यवस्था पर अपनी सहमति प्रकट की। भरत माताओं से विदा लेकर, शत्रुघ्न के साथ रथ पर सवार हो, मन्त्रियों और वशिष्ठ को साथ लेकर, वह नन्दी ग्राम गया। यद्यपि भरत ने आज्ञा नहीं दी थी, तो भी उसकी सेना उसके साथ निकल पड़ी।

भरत ने आज्ञा दी कि नन्दी ग्राम में पादुकाओं की वह सब मार्यादा की जाये, जो राजा की की जाती है। यानि उनको भी श्वेत छत्र के नीचे रखा जाये।

उसकी माता के कारण, उसकी जो अपकीर्ति हुई थी, उसको दूर करने के लिए भरत ने जटायें बढ़ाईं, वल्कल पहिनकर, मुनि वेष पहिनकर, वह नन्दी ग्राम से ही कोशल देश का परिपालन करने लगा। राज्य की सब बातें पादुका को निवेदित की जातीं। सामन्त जो उपहार आदि लाते, वे भी नैवेद्य के रूप में उन पादुकाओं को दे दिये जाते। राम पट्टाभिषेक की जगह पर मानों उनकी पादुकाओं का ही पट्टाभिषेक हो गया हो।

भरत के चले जाने के बाद, राम कुछ दिन उस पर्णशाला में ही रहे। होते-होते उन्हें एक बात मालूम हुई। उस प्रान्त के मुनि राम को देखकर कानाफूसी करने लगे। यही नहीं, वे अपने आश्रम छोड़कर भी जाने लगे। वे ऐसा क्यों कर रहे थे। यह जानने के लिए राम ने मुनियों के कुलपति बूढ़े मुनि के पास जाकर कहा—"सुनता हूँ कि आप सब आश्रम छोड़कर क्यों जा रहे हैं। क्या मैंने या मेरे भाई ने या मेरे पत्नी ने अनजाने कुछ कर तो नहीं दिया है?"

इस पर कुलपति ने कहा—"आपने तो कुछ नहीं किया, आपके कारण राक्षस

हमें बहुत डरा रहे हैं। रावण का भाई खर, मुनियों को भगा रहा है। कभी आपके पीछे भी यह लगेगा। इसलिए हम जाने की सोच रहे हैं। योद्धा हैं आप, फिर पत्नी के साथ रह रहे हैं। आपके लिए भी यह जगह छोड़ना अच्छा है।"

वहाँ के मुनि बहुत दूर एक और आश्रम में चले गये। राम कुछ दिन तो वहीं रहे, फिर उन्होंने भी उस जगह को छोड़ने का निश्चय किया। सीता, लक्ष्मण को लेकर, वे अत्रि महामुनि के आश्रम में गये। उन्होंने उनका पुत्र की तरह सम्मान किया, उसने स्वयं उनका आदर सत्कार किया।

अत्रि महामुनि ने अपनी प्रसिद्ध पत्नी अनुसूया को बुलाकर, उनसे परिचय कराया। अनुसूया तब बहुत वृद्धा था। बाल सफेद हो गये थे। अंग शिथिल हो गये थे। परन्तु उसकी तपस्या अतुलनीय थी।

अत्रि महामुनि ने राम से कहा—"एक समय वर्षा न हुई, चौदह वर्ष तक दुर्भिक्ष रहा। तब इसने अपनी तपःशक्ति से गंगा को बहाया और मुनि आदियों के लिए फलों का उत्पादन कराया।

एक बार इसने दस रात को एक ही रात बना दी। सीता से कहो कि वह इसे नमस्कार करे।"

राम ने सीता से कहा—"इस महात्मा का कहना सुन लिया है न! अनुसूया देवी को नमस्कार करो। इससे तुम्हारा कल्याण होगा।"

सीता ने अनुसूया को अपना नाम बताया, नमस्कार किया और उसका कुशल क्षेम पूछा।

अनुसूया ने सीता को देखकर सन्तुष्ट होकर कहा—"बेटी, तुम सब बन्धु, वैभव ऐश्वर्य, अहंकार सब छोड़कर, पति के साथ पतिव्रत धर्म निभाने के लिए जंगलों में आई हो। भाग्य है, तो तुम्हारा है। मैंने बहुत सोचकर देखा है, कोई भी स्त्री की उस तरह रक्षा नहीं करता, जिस तरह पति करता है। तुम इसी प्रकार पति का अनुसरण करते पतिव्रत धर्म निभाओ।"

"मेरा पति गुणवान है, दयालु है। धर्मात्मा है। मुझ पर उन्हें अचंचल प्रेम है। मेरे लिये वे माता के समान हैं, पिता के समान हैं। सुन्दर हैं, ऐसे पति की क्यों न सेवा करूँ! मैंने बचपन से

"फिर भी, जो कुछ मैं सन्तुष्ट होकर दूं, उसे लो।" कहकर अनुसूया ने सीता को एक दिव्य पुष्प माला, एक साड़ी, कुछ आभूषण, शरीर पर लेप करने के लिए चन्दन दिये।

फिर अनुसूया ने कहा—"सुनती हूँ कि तुम्हारे पति ने तुमसे स्वयंवर विवाह किया था। मुझे वह सब सुनाओ तो...."

सीता ने अपनी सारी कहानी अनुसूया को सुनाई।

"मेरे पिता जनक मिथिला के महाराजा हैं। वे यज्ञ के लिए भूमि में हल चला रहे थे कि मैं उनको मिली। क्योंकि तब उनकी कोई सन्तान न थी इसलिए अपनी बड़ी पत्नी को मुझे देकर, मुझे अपनी लड़की समझकर उससे पालने के लिए कहा। जब मैं विवाह योग्य हुई, तो उनको चिन्ता होने लगी। बहुत खोजा, मेरे योग्य पति उनको नहीं मिला। फिर उन्होंने स्वयंवर करने का निश्चय किया और कहा कि जो कोई उनके घर में रखे धनुष पर बाण चढ़ायेगा, उससे मेरा विवाह कर देंगे—क्योंकि सिवाय उनके, जिनमें दिव्य शक्ति है उसको उठाने में निश्शक्त हो जाते

पतिव्रता स्त्री के कर्तव्य सीखे हैं। मैं जब वन में आ रही थी, तब मेरी सास कौशल्या ने भी मुझे उपदेश दिये थे। अब आप भी उपदेश दे रही हैं।" सीता ने सविनय कहा।

सीता के मधुर भाषण पर अनुसूया बड़ी प्रसन्न हुई। उसने सीता से कहा—"बेटी, यदि तुम्हें कोई इच्छा हो, तो बताओ, मैं पूरी करूँगी।"

सीता को यह सुनकर आश्चर्य हुआ। "आपका यह पूछना ही मेरे लिए सौभाग्य है।"
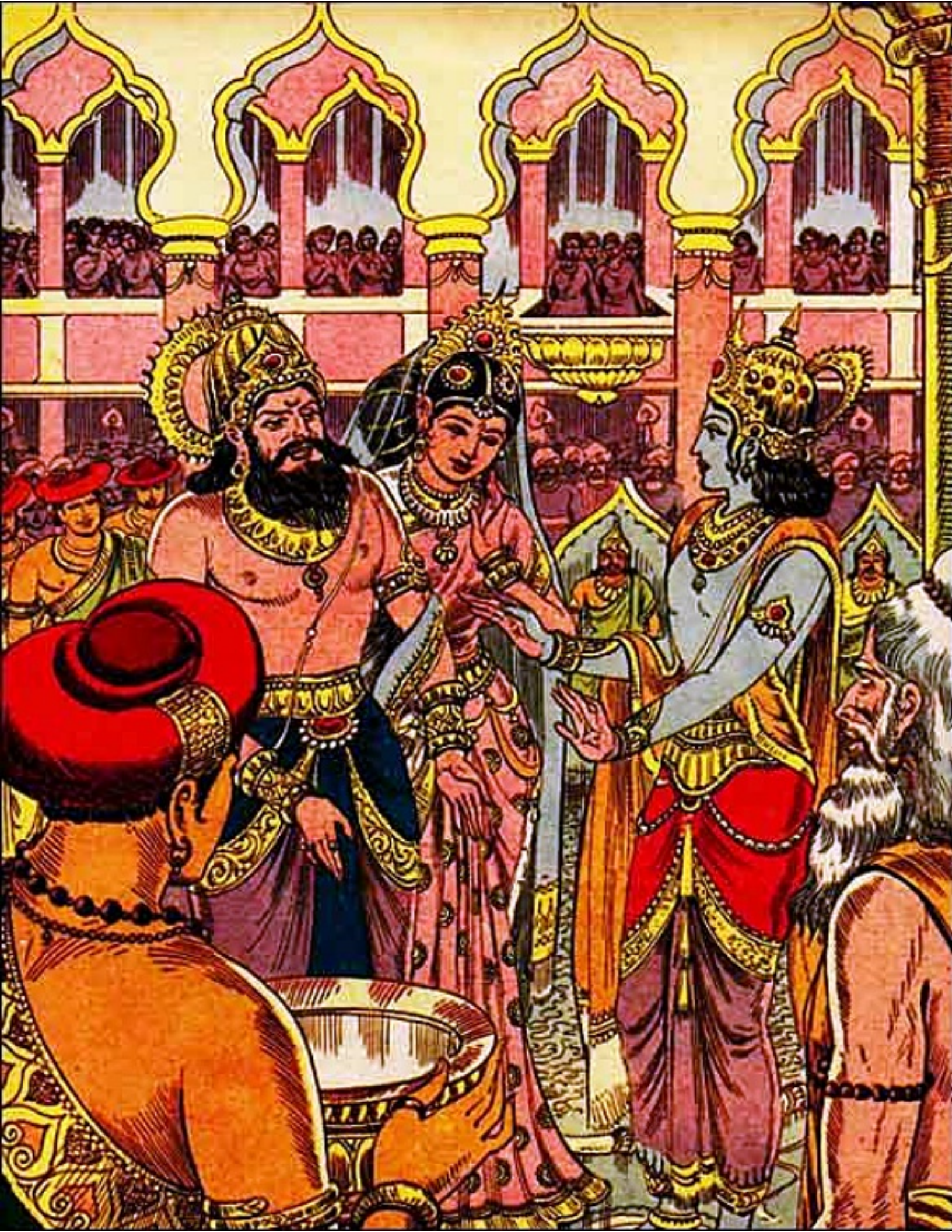
थे, कितने ही स्वयंवर में आये, धनुष उठाने की कोशिश की, पर वे सफल न हुए। तभी विश्वामित्र के साथ राम, लक्ष्मण यज्ञ देखने आये। विश्वामित्र के कहने पर मेरे पिता ने उनको वह धनुष दिखाया। राम धनुष उठाकर, उसकी प्रत्यंचा लगा रहे थे कि वह टूट गया। तुरत मेरे पिता ने कन्यादान के लिए जल कलश मँगवाया। परन्तु राम ने बिना पिता की अनुमति के मुझ से विवाह करने से इनकार कर दिया। फिर मेरे पिता ने महाराजा दशरथ के पास खबर भेजकर, उनको बुलवाया और तब हमारा विवाह हुआ।

यह सुन अनुसूया बहुत सन्तुष्ट हुई। उसने अपने सामने ही सीता को शृंगार करने के लिए कहा। फिर उसे राम के पास भेजा।

उसके अलंकारों को देखकर राम ने पूछा—"ये सब आभूषण कहाँ से आये?" सीता ने कहा कि वे सब अनुसूया ने उपहार में दिये थे। राम और लक्ष्मण बड़े खुश हुए।

सीता, राम, लक्ष्मण ने वह रात अत्रि महामुनि के आश्रम में ही बिताई। अगले दिन अत्रि महामुनि से उन्होंने विदा ली।

"बेटा, इस वन में नरभक्षक राक्षस भी हैं। मैं वह रास्ता दिखाऊँगा, जिस पर मुनि फल तोड़ने बटोरने के लिए जाया करते हैं। उसी रास्ते जाना।" अत्रि महामुनि ने कहा।

उनके दिखाये हुए रास्ते पर चलते-चलते सीता, राम, लक्ष्मण भयंकर दण्डकारण्य में प्रविष्ट हुए। (अयोध्याकाण्ड समाप्त)

९. अमून आलय

ईसा से १३ सदी पूर्व मिश्र में कार्नाक के पास प्रथम रामेसिन द्वारा बनाया हुआ यह आलय मिश्र की शिल्प कला का सुन्दर नमूना है। आलय का क्षेत्रफल ६ हज़ार वर्ग गज है। चित्र में प्रदर्शित स्तम्भ का व्यास १२ फीट है और ऊँचाई ७० फीट है।

१. प्रेमचन्द जैन, डाल्टेन गंज

क्या आप "भारत के इतिहास" में अंग्रेज़ों के बारे में भी छापेंगे?

जब भारत का इतिहास देना शुरु किया है, तो उनका भी नम्बर आयेगा।

क्या आप ऐसी कहानियाँ नहीं छाप सकते जो आश्चर्यजनक हों, तथा सत्य भी हों?

छापते हैं, छाप चुके हैं और छापेंगे।

२. सन्तोषकुमार, किशनगंज

"चन्दामामा" का मूल्य आठ साल पहले छः आने था, लेकिन अब आठ आने हैं। ऐसा क्यों है?

हम आंकड़ों में आपको उलझाना नहीं चाहते, यही कहेंगे कि इन आठ सालों में हर चीज़ के साथ कागज़ का दाम बढ़ा है...मुद्रण सामग्री भी और खर्चीली हो गई है। इसी कारण हमें दाम बढ़ाने पड़े।

३. अशोक श्रीवस्तव, बरेली

आपने एक प्रश्न के उत्तर में कहा था कि "चन्दामामा" विशेषतः कहानियों की पत्रिका है। फिर आप विज्ञापन के स्थान पर कहानियाँ क्यों नहीं छापते हैं?

अगर विज्ञापन न छापेंगे तो कहानियाँ भी न छाप पायेंगे। विज्ञापनों के कारण ही 'चन्दामामा' को इस दाम पर दे पा रहे हैं। मुद्रण का खर्च इतना बढ़ गया है कि अन्यथा हमें दाम बढ़ाने होंगे, जो पाठक न चाहेंगे।

४. कविनारायण त्रिपाठी, पदमपुर

फोटो परिचयोक्ति बच्चों के लिए है या बड़ों के लिए? यदि आप कहेंगे "बच्चों के लिए" तो आपको कैसे मालूम होगा कि उसमें भाग लेनेवाला बच्चा है, या बूढ़ा?

फोटो परिचयोक्ति "चन्दामामा" के पाठकों के लिए है। कोई भी भेज सकता है। दूसरे प्रश्न का उत्तर साफ़ है।

५. विजय, कुलटी

क्या भारत का इतिहास पुस्तक के रूप में प्रकाशित होगा?

अभी इसे खतम होने दीजिए, फिर देखा जायेगा।

आप "चन्दामामा" उर्दू में प्रकाशित कर सकते हैं?

अभी तो नहीं।

६. श्यामलाल, इन्दोर

"चन्दामामा" प्रश्नोत्तर स्तम्भ जब से आपने खोला है, तब से यही शिकायत आती है कि पृष्ठ बढ़ाये जायें, आप जिस प्रकार महाभारत में छोटे अक्षर देते हैं वैसे सब कहानियों में क्यों नहीं देते?

सभी कहानियाँ इसी टाइप में दी गईं तो पढ़ने की उतनी सुविधा न रहेगी, जितनी कि अब है।

७. परमजीतसिंह, कानपुर

जो हमारे पास "चन्दामामा" की पुरानी प्रतियाँ जमा हो जाती हैं, उनका हमें क्या करना चाहिए?

ऐसे लोगों को दे दीजिए, जो इसे खरीद नहीं पाते हैं।

८. नली नारव्य पाडा, सराईकेला

आपने उड़िया "चन्दामामा" प्रकाशित करना कब से बन्द किया?

अक्टूबर १९५७ से प्रकाशन बन्द हुआ।

Photo by P. Ram Rao

पुरस्कृत परिचयोक्ति

है जीवन की यह अन्तिम घड़ी !

प्रेषक : जगदीपसिंह चौहान

Photo by A. L. Kantha Rao

पुरस्कृत परिचयोक्ति

है मेरे जीवन की पहली सीढ़ी !!

प्रेषक : जगदीपसिंह चौहाण